दादा भगवान कथित

सत्य - असत्य के रहस्य

दादा भगवान कथित

सत्य-असत्य के रहस्य

मूल गुजराती संकलन : डॉ. नीरू बहन अमीन

अनुवाद : महात्मागण

प्रकाशक : अजीत सी. पटेल
दादा भगवान विज्ञान फाउन्डेशन
1, वरूण अपार्टमेन्ट, 37, श्रीमाली सोसायटी,
नवरंगपुरा पुलिस स्टेशन के सामने,
नवरंगपुरा, अहमदाबाद - 380009,
Gujarat, India.
फोन : +91 79 3500 2100

प्रथम संस्करण : 3000, प्रतियाँ, अगस्त, 2010
रीप्रिन्ट : 2000, प्रतियाँ, नवम्बर, 2012
नई रीप्रिन्ट : 2000, प्रतियाँ, दिसम्बर, 2013

भाव मूल्य : 'परम विनय' और 'मैं कुछ भी जानता नहीं', यह भाव!

द्रव्य मूल्य : 20 रुपए

मुद्रक : अंबा मल्टीप्रिन्ट
B-99, इलेक्ट्रॉनिक्स GIDC,
क-6 रोड, सेक्टर-25,
गांधीनगर-382044.
Gujarat, India.
फोन : +91 79 3500 2142

त्रिमंत्र

नमो अरिहंताणं

नमो सिद्धाणं

नमो आयरियाणं

नमो उवज्झायाणं

नमो लोए सव्वसाहूणं

एसो पंच नमुक्कारो

सव्व पावप्पणासणो

मंगलाणं च सव्वेसिं

पढमं हवइ मंगलं ॥ १ ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥

ॐ नमः शिवाय ॥ ३ ॥

जय सच्चिदानंद

‘दादा भगवान’ कौन?

जून 1958 की एक संध्या का करीब छः बजे का समय, भीड़ से भरा सूरत शहर का रेल्वे स्टेशन, प्लेटफार्म नं. 3 की बेंच पर बैठे श्री अंबालाल मूलजीभाई पटेल रूपी देहमंदिर में कुदरती रूप से, अक्रम रूप में, कई जन्मों से व्यक्त होने के लिए आतुर ‘दादा भगवान’ पूर्ण रूप से प्रकट हुए और कुदरत ने सर्जित किया अध्यात्म का अद्‌भुत आश्चर्य। एक घंटे में उन्हें विश्वदर्शन हुआ। ‘मैं कौन? भगवान कौन? जगत् कौन चलाता है? कर्म क्या? मुक्ति क्या?’ इत्यादि जगत् के सारे आध्यात्मिक प्रश्नों के संपूर्ण रहस्य प्रकट हुए। इस तरह कुदरत ने विश्व के सम्मुख एक अद्वितीय पूर्ण दर्शन प्रस्तुत किया और उसके माध्यम बने श्री अंबालाल मूलजी भाई पटेल, गुजरात के चरोतर क्षेत्र के भादरण गाँव के पाटीदार, कॉन्ट्रैक्ट का व्यवसाय करनेवाले, फिर भी पूर्णतया वीतराग पुरुष!

‘व्यापार में धर्म होना चाहिए, धर्म में व्यापार नहीं’, इस सिद्धांत से उन्होंने पूरा जीवन बिताया। जीवन में कभी भी उन्होंने किसीके पास से पैसा नहीं लिया बल्कि अपनी कमाई से भक्तों को यात्रा करवाते थे।

उन्हें प्राप्ति हुई, उसी प्रकार केवल दो ही घंटों में अन्य मुमुक्षुजनों को भी वे आत्मज्ञान की प्राप्ति करवाते थे, उनके अद्‌भुत सिद्ध हुए ज्ञानप्रयोग से। उसे अक्रम मार्ग कहा। अक्रम, अर्थात् बिना क्रम के, और क्रम अर्थात् सीढ़ी दर सीढ़ी, क्रमानुसार ऊपर चढ़ना। अक्रम अर्थात् लिफ्ट मार्ग, शॉर्ट कट।

वे स्वयं प्रत्येक को ‘दादा भगवान कौन?’ का रहस्य बताते हुए कहते थे कि ‘‘यह जो आपको दिखते हैं वे दादा भगवान नहीं हैं, वे तो ‘ए.एम.पटेल’ हैं। हम ज्ञानीपुरुष हैं और भीतर प्रकट हुए हैं, वे ‘दादा भगवान’ हैं। दादा भगवान तो चौदह लोक के नाथ हैं। वे आप में भी हैं, सभी में हैं। आपमें अव्यक्त रूप में रहे हुए हैं और ‘यहाँ’ हमारे भीतर संपूर्ण रूप से व्यक्त हुए हैं। दादा भगवान को मैं भी नमस्कार करता हूँ।’’

निवेदन

ज्ञानी पुरुष संपूज्य दादा भगवान के श्रीमुख से अध्यात्म तथा व्यवहारज्ञान से संबंधित जो वाणी निकली, उसको रिकॉर्ड करके, संकलन तथा संपादन करके पुस्तकों के रूप में प्रकाशित किया जाता है। विभिन्न विषयों पर निकली सरस्वती का अद्‌भुत संकलन इस पुस्तक में हुआ है, जो नए पाठकों के लिए वरदान रूप साबित होगा।

प्रस्तुत अनुवाद में यह विशेष ध्यान रखा गया है कि वाचक को दादाजी की ही वाणी सुनी जा रही है, ऐसा अनुभव हो, जिसके कारण शायद कुछ जगहों पर अनुवाद की वाक्य रचना हिन्दी व्याकरण के अनुसार त्रुटिपूर्ण लग सकती है, लेकिन यहाँ पर आशय को समझकर पढ़ा जाए तो अधिक लाभकारी होगा।

प्रस्तुत पुस्तक में कई जगहों पर कोष्ठक में दर्शाए गए शब्द या वाक्य परम पूज्य दादाश्री द्वारा बोले गए वाक्यों को अधिक स्पष्टतापूर्वक समझाने के लिए लिखे गए हैं। जबकि कुछ जगहों पर अंग्रेजी शब्दों के हिन्दी अर्थ के रूप में रखे गए हैं। दादाश्री के श्रीमुख से निकले कुछ गुजराती शब्द ज्यों के त्यों *इटालिक्स* में रखे गए हैं, क्योंकि उन शब्दों के लिए हिन्दी में ऐसा कोई शब्द नहीं है, जो उसका पूर्ण अर्थ दे सके। हालांकि उन शब्दों के समानार्थी शब्द अर्थ के रूप में, कोष्ठक में और पुस्तक के अंत में भी दिए गए हैं।

ज्ञानी की वाणी को हिन्दी भाषा में यथार्थ रूप से अनुवादित करने का प्रयत्न किया गया है किन्तु दादाश्री के आत्मज्ञान का सही आशय, ज्यों का त्यों तो, आपको गुजराती भाषा में ही अवगत होगा। जिन्हें ज्ञान की गहराई में जाना हो, ज्ञान का सही मर्म समझना हो, वह इस हेतु गुजराती भाषा सीखें, ऐसा हमारा अनुरोध है।

अनुवाद से संबंधित कमियों के लिए आपसे क्षमाप्रार्थी हैं।

दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा प्रकाशित हिन्दी पुस्तकें

1. आत्मसाक्षात्कार
2. ज्ञानी पुरुष की पहचान
3. सर्व दु:खों से मुक्ति
4. कर्म का सिद्धांत
5. आत्मबोध
6. मैं कौन हूँ ?
7. पाप-पुण्य
8. भुगते उसी की भूल
9. एडजस्ट एवरीव्हेयर
10. टकराव टालिए
11. हुआ सो न्याय
12. चिंता
13. क्रोध
14. प्रतिक्रमण (सं, ग्रं)
16. दादा भगवान कौन ?
17. पैसों का व्यवहार (सं, ग्रं)
19. अंत:करण का स्वरूप
20. जगत कर्ता कौन ?
21. त्रिमंत्र
22. भावना से सुधरे जन्मोंजन्म
23. चमत्कार
24. प्रेम
25. समझ से प्राप्त ब्रह्मचर्य (सं, पू, उ)
28. दान
29. मानव धर्म
30. सेवा-परोपकार
31. मृत्यु समय, पहले और पश्चात्
32. निजदोष दर्शन से... निर्दोष
33. पति-पत्नी का दिव्य व्यवहार (सं)
34. क्लेश रहित जीवन
35. गुरु-शिष्य
36. अहिंसा
37. सत्य-असत्य के रहस्य
38. वर्तमान तीर्थंकर श्री सीमंधर स्वामी
39. माता-पिता और बच्चों का व्यवहार(सं)
40. वाणी, व्यवहार में... (सं)
41. कर्म का विज्ञान
42. सहजता
43. आप्तवाणी - 1
44. आप्तवाणी - 2
45. आप्तवाणी - 3
46. आप्तवाणी - 4
47. आप्तवाणी - 5
48. आप्तवाणी - 6
49. आप्तवाणी - 7
50. आप्तवाणी - 8
51. आप्तवाणी - 9
52. आप्तवाणी - 13 (पू, उ)
54. आप्तवाणी - 14 (भाग-1)
55. ज्ञानी पुरुष (भाग-1)

(सं - संक्षिप्त, ग्रं - ग्रंथ, पू - पूर्वार्ध, उ - उत्तरार्ध)

★ दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा गुजराती भाषा में भी कई पुस्तकें प्रकाशित हुई है। वेबसाइट www.dadabhagwan.org पर से भी आप ये सभी पुस्तकें प्राप्त कर सकते हैं।

★ दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा हर महीने हिन्दी, गुजराती तथा अंग्रेजी भाषा में ''दादावाणी'' मैगेज़ीन प्रकाशित होता है।

संपादकीय

सत्य को समझने के लिए, सत्य को प्राप्त करने के लिए प्रत्येक परमार्थी जी तोड़ पुरुषार्थ करता है। परन्तु सत्य-असत्य की यथार्थ भेदरेखा नहीं समझने से उलझन में ही फँस जाता है। सत्, सत्य और असत्य ऐसे तीन प्रकार से स्पष्टीकरण देकर आत्मज्ञानी संपूज्य दादाश्री ने तमाम उलझनों को सरलता से सुलझा दिया है।

सत् मतलब शाश्वत तत्व आत्मा। और सत्य-असत्य वह व्यवहार में है। व्यवहार सत्य सापेक्ष है, दृष्टिबिन्दु के आधार पर है। जिस प्रकार माँसाहार करना, वह हिन्दुओं के लिए गलत है, जब कि मुस्लिमों के लिए सही है। इसमें कहाँ सत् आया? सत् सर्व को स्वीकार्य होता है। उसमें परिवर्तन नहीं होता है।

ब्रह्म सत्य और जगत् भी सत्य है। ब्रह्म रियल सत्य है और जगत् रिलेटिव सत्य है। यह सिद्धांत देकर पूज्यश्री ने कमाल कर दिया है। इस जगत् को मिथ्या मानने को किसीका मन नहीं मानता है। प्रत्यक्ष अनुभव में आनेवाली वस्तु को मिथ्या किस प्रकार से माना जा सकता है?! तो सच क्या है? ब्रह्म अविनाशी सत्य है और जगत् विनाशी सत्य है! और समाधान यहाँ पर हो जाता है।

मोक्षमार्ग में सत्य की अनिवार्यता कितनी? जहाँ पुण्य-पाप, शुभ-अशुभ, सुख-दुःख, अच्छी-बुरी आदतें जैसे तमाम द्वंद्वों का अंत आता है, जहाँ रिलेटिव को स्पर्श करता एक परमाणु भी नहीं रहता है, वैसी द्वंद्वातीत दशा में, 'परम सत् स्वरूप' में, जगत् के माने हुए 'सत्य' या 'असत्य' कितनी अपेक्षा से 'सच' ठहरते हैं? जहाँ रियल सत् है वहाँ व्यवहार के सत्य या असत्य ग्रहणीय या त्याज्य नहीं बनते, निकाली बन जाते हैं, ज्ञेय स्वरूप बन जाते हैं!

संसार सुख की खेवना है, तब तक व्यवहार सत्य की निष्ठा और असत्य की उपेक्षा ज़रूरी है। भूल से असत्य का आसरा ले लें तो वहाँ प्रतिक्रमण रक्षक बन जाता है। पर जहाँ आत्मसुख प्राप्ति की आराधना शुरू होती है, खुद के परम्सत् स्वरूप की भजना शुरू होती

है, वहाँ व्यवहार सत्य-असत्य की भजना या उपेक्षा पूरी हो जाती है, वहाँ फिर व्यवहार सत्य का आग्रह भी अंतरायरूप (बाधक) बन जाता है!

व्यवहार सत्य भी कैसा होना चाहिए? हित, प्रिय और मित हो तब ही उस सत्य को सत्य कहा जा सकता है। वाणी, वर्तन और मन से भी किसीको किंचित् मात्र दुःख नहीं देना वह मूल सत्य भी व्यवहार सत्य है!

इस तरह ज्ञानी पुरुष व्यवहार सत्य की उपेक्षा किए बिना, उसे उसके यथास्थान पर प्रस्थापित करके यथार्थ समझ देते हैं! वे सत्, सत्य और असत्य के तमाम रहस्य यहाँ प्रस्तुत संकलन में अगोपित होते हैं, जो जीवन के पंथ में शांति दिलाते हैं!

– **डॉ. नीरु बहन अमीन के**

जय सच्चिदानंद

सत्य-असत्य के रहस्य

सत्य, विनाशी और अविनाशी

प्रश्नकर्ता : सत्य और असत्य, इन दोनों के बीच का भेद क्या है?

दादाश्री : असत्य तो असत्य है ही। पर यह जो सत्य है न, वह व्यवहार सत्य है, सच्चा सत्य नहीं है। ये जमाई, वे हमेशा के जमाई नहीं है, ससुर भी हमेशा के लिए नहीं होता। निश्चय सत्य हो वह सत् कहलाता है, वह अविनाशी होता है। और विनाशी, उसे सत्य कहा जाता है। यह सत्य भी वापिस असत्य हो जाता है, असत्य ठहरता है। फिर भी सांसारिक सुख चाहिए तो असत्य पर से सत्य में आना चाहिए, और मोक्ष में जाना हो तो यह सत्य भी असत्य ठहरेगा तब मोक्ष होगा! इसलिए यह सत्य और असत्य दोनों कल्पित ही हैं सिर्फ। पर जिसे सांसारिक सुख चाहिए, उसे सत्य में रहना चाहिए कि जिससे दूसरों को दुःख नहीं हो। परम सत्य प्राप्त करने तक ही इस सत्य की ज़रूरत है।

'सत्' में नहीं कभी फर्क

इसलिए यह जो 'सत्य-असत्य' है न, इस दुनिया का जो सत्य है न, वह भगवान के सामने बिलकुल असत्य ही है, वह सत्य है ही नहीं। यह सब पाप-पुण्य का फल है। दुनिया आपको 'चंदूभाई' ही कहती है न?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : जब कि भगवान कहेंगे, 'नहीं, आप शुद्धात्मा हो।' सत् एक ही प्रकार का होता है, चाहे जहाँ जाओ तो भी। हरएक जीव में सत् एक ही प्रकार का है। सत् तो अविनाशी है और यह सत्य तो हरएक का अलग-अलग होता है, इसलिए वह विनाशी है। यह सत्य झूठ के आधार पर रहा हुआ है।

प्रश्नकर्ता : तो सनातन सत्य नाम की वस्तु में आप मानते हैं?

दादाश्री : सनातन सत्य नहीं है, पर सनातन सत् है। वह इटरनल (शाश्वत) कहलाता है। मूल तत्व अविनाशी है और उसकी अवस्था विनाशी है।

प्रश्नकर्ता : तो सत्य मतलब क्या?

दादाश्री : एक व्यवहार सत्य है, जो पूरी दुनिया में रिलेटिव सत्य कहा जाता है और एक रियल सत्य, वह सत् कहलाता है, वह सत्य नहीं कहलाता। अविनाशी अस्तित्व को सत् कहते हैं और विनाशी अस्तित्व को सत्य कहते हैं।

नहीं समाता, सत् किसीमें...

प्रश्नकर्ता : तो सत् यानी क्या?

दादाश्री : सत् का अर्थ दूसरा कुछ है ही नहीं। सत् मतलब कोई भी अविनाशी वस्तु हो, उसे सत् कहा जाता है। उसका दूसरा कोई अर्थ ही नहीं है इस वर्ल्ड में। केवल सत् ही इस दुनिया में अविनाशी है और वह किसी वस्तु में समाए ऐसा नहीं है, इस हिमालय के आरपार निकल जाए ऐसा है। उसे कोई दीवारों के बंधन या ऐसे कोई बंधन बाधक नहीं हैं!

रिलेटिव सत्य का उद्भवस्थान?

प्रश्नकर्ता : आत्मा का एक सत्य है। पर यह दूसरा रिलेटिव सत्य, वह किस तरह से उत्पन्न हुआ?

दादाश्री : हुआ नहीं है, पहले से है ही। रिलेटिव और रियल हैं ही! पहले से ही रिलेटिव है। यह तो अंग्रेज़ी शब्द बोला है, बाक़ी उसका नाम गुजराती में सापेक्ष है। सापेक्ष शब्द सुना है? तो सापेक्ष है या नहीं यह जगत्?! यह जगत् सापेक्ष है और आत्मा निरपेक्ष है। सापेक्ष मतलब रिलेटिव, अंग्रेज़ी में रिलेटिव कहते हैं। वे अभी के

लोग गुजराती भाषा का सापेक्ष शब्द समझते नहीं है, इसलिए मैं 'रिलेटिव' अंग्रेज़ी में बोलता हूँ। तो आप चौंक गए?!

दो प्रकार के सत्य हैं। एक रिलेटिव सत्य है और एक रियल सत्य है। वह रिलेटिव सत्य समाज के आधीन है, कोर्ट के आधीन है। मोक्ष में जाने के लिए वह काम में नहीं आता। वह आपको डेवलपमेन्ट के साधन के रूप में काम आता है, डेवलपमेन्ट के समय काम में आता है। क्या नाम है आपका?

प्रश्नकर्ता : चंदूभाई।

दादाश्री : चंदूभाई, वह रिलेटिव सत्य है। वह बिलकुल गलत नहीं है। वह आपको यहाँ पर डेवलप होने में काम आएगा। पर जब खुद के स्वरूप का भान करना होगा, तब वह सत्य काम नहीं आएगा। उस दिन तो यह सत्य सारा गलत हो जाएगा।

फिर 'ये मेरे ससुर हैं' ऐसा कहे तो कब तक बोलेगा? वाइफ ने डायवोर्स नहीं लिया तब तक। हाँ, फिर कहने जाएँ कि 'हमारे ससुर' तो?

प्रश्नकर्ता : नहीं कह सकते।

दादाश्री : इसलिए यह सत्य ही नहीं है। यह तो रिलेटिव सत्य है।

प्रश्नकर्ता : 'ससुर थे' ऐसा कहें तो?

दादाश्री : 'थे' ऐसा बोलें तो भी गालियाँ देगा। क्योंकि उसका दिमाग खिसक गया है और हम ऐसा बोलें, उसके बदले मेरी भी चुप और तेरी भी चुप!

अब रिलेटिव सत्य रिलेटिव में से ही उत्पन्न होता है, नियम ऐसा है। और रिलेटिव सत्य मतलब विनाशी सत्य। यदि आपको यह सत्य, विनाशी सत्य पसंद हो तो विनाशी में रमणता करो और वह पसंद नहीं हो तो इस रियल सत्य में आ जाओ।

तुंडे तुंडे भिन्न सत्य

प्रश्नकर्ता : सत्य हरएक का अलग-अलग होता है?

दादाश्री : सत्य हरएक का अलग-अलग होता है, पर सत्य का प्रकार एक ही होता है। वह सारा रिलेटिव सत्य है, वह विनाशी सत्य है।

व्यवहार में सत्य की ज़रूरत है, पर वह सत्य अलग-अलग होता है। चोर कहेगा, 'चोरी करना सत्य है।' लुच्चा कहेगा, 'लुच्चा होना सत्य है।' हरएक का सत्य अलग-अलग होता है। ऐसा होता है या नहीं होता?

प्रश्नकर्ता : होता है।

दादाश्री : इस सत्य को भगवान सत्य मानते ही नहीं। यहाँ जो सत्य है न, वह वहाँ पर गिनती में नहीं लेते। क्योंकि यह विनाशी सत्य है, रिलेटिव सत्य है। और वहाँ पर यह रिलेटिव तो चलता नहीं, वहाँ तो रियल सत्य चाहिएगा।

सत्य और असत्य वे दोनों द्वंद्व हैं, दोनों विनाशी हैं।

प्रश्नकर्ता : तो 'सत्य और असत्य' हमने मान लिया है?!

दादाश्री : सत्य और असत्य अपनी माया से दिखता है कि 'यह सही और यह गलत।' और वह फिर 'सत्य और असत्य' सबके लिए एक-सा नहीं है। आपको जो सत्य लगता है, वह दूसरे को असत्य लगता है, इसे असत्य लगता हो वह किसी दूसरे को सत्य लगता है। ऐसे सबको एक जैसा नहीं होता। अरे, चोर लोग क्या कहते हैं, 'भाई, चोरी तो हमारा व्यवसाय है। आप अब किसलिए निंदा करते हो हमारी?' और हम जेल में भी जाते हैं। उसमें आपको क्या हर्ज है?! हम अपना व्यवसाय करते हैं।' चोर भी एक कम्युनिटी है। एक आवाज़ है न उनकी! यह कसाई का व्यवसाय करता हो वह हमें कहे, 'भाई, हम अपना व्यवसाय कर रहे हैं। आपको क्या आपत्ति है?' हरकोई अपने-अपने सत्य को सत्य कहता है, तो इसमें सत्य किसे कहना चाहिए?

प्रश्नकर्ता : वह व्यवहार सत्य अनेकांगी है न?!

दादाश्री : वह तो अनेकांगी ही है सारा। पर वह विनाशी है। यह व्यवहार सत्य, रिलेटिव सत्य, मात्र विनाशी है।

प्रश्नकर्ता : आप सापेक्ष सत्य कहना चाहते हैं न?

दादाश्री : हाँ, यह सापेक्ष सत्य है। इसलिए यह जो जगत् का सत्य है न, वह तो सापेक्ष सत्य है। अपने देश में जो नोट चलते हैं न, वे नोट दूसरे देश में नहीं चलते। किसी जगह पर सत्य माना जाता हो, वह दूसरे देश में जाए तब वह सत्य नहीं माना जाता। इसलिए कुछ भी ठिकाना ही नहीं है।

सत्य मतलब तो आज तक की समझ का सार! आपका सत्य अलग है, उनका सत्य अलग है, किसी और का सत्य अलग है और फिर कॉमन सत्य अलग है।

प्रश्नकर्ता : जो सत्य है उसके नज़दीक हम पहुँच सकते हैं, पर सत्य को प्राप्त नहीं कर सकते हैं, ऐसा कहा जाता है।

दादाश्री : हाँ, वह प्राप्त नहीं कर सकते। यह जो सत्य है न, वे सब खुद के व्यू पोइन्ट के सत्य हैं। अब व्यू पोइन्ट के सत्य में से बहुत विचारकों ने कॉमन सत्य ढूंढ निकाला है कि कॉमन सत्य क्या होना चाहिए! वह विचारकों की खोज है। वही कॉमन सत्य है, उसे कानून के रूप में रख दिया। बाक़ी, वह भी सत्य नहीं है। वह सब व्यवहार सत्य है। इसलिए एक अंश से लेकर तीन सौ साठ अंश तक के सारे सत्य जो हैं, वे तरह-तरह के सत्य होते हैं और वे मतभेदवाले होते हैं। इसलिए कोई उसकी थाह नहीं पा सकता।

जो रियल सत्य है, उसमें परिवर्तन नहीं होता। वहाँ सभी एक मत ही होते हैं। रियल सत्य एक मतवाला होता है। रिलेटिव सत्य तरह-तरह के मतोंवाला होता है। वह वास्तव में सत्य नहीं है।

निश्चय मतलब पूर्ण सत्य और व्यवहार मतलब कुछ हद तक का सत्य है।

नहीं असत् भगवान के यहाँ

इसलिए सत्य और असत्य, वे दोनों 'वस्तु' ही नहीं हैं। वे तो सामाजिक खोज है। इसलिए यह सब सामाजिक है, बुद्धिवाद है। किसी समाज में फिर से विवाह करना, वह गुनाह है और फ़ॉरेनवाले एक घंटे में फिर से विवाह कर आते हैं. वे उसे कानून के अनुसार है, ऐसा मानते हैं। इसलिए ये अलग-अलग हैं, वह सापेक्षित वस्तु है। पर वह सत्य कुछ नियमों के अंदर छुपा हुआ है।

प्रश्नकर्ता : सत्य और असत्य जो हैं, उसमें एडजस्टमेन्ट किस तरह करना चाहिए?

दादाश्री : सत्य और असत्य वे भ्रांतिजन्य चीज़ें हैं। भगवान के वहाँ एक ही हैं। और यह तो लोगों ने दोनों को अलग कर दिया है।

आपके लिए माँसाहार करना हिंसा है और मुसलमानों के लिए माँसाहार करना अहिंसा है। इसलिए यह सब 'सब्जेक्टिव' (सापेक्ष) है और भगवान के वहाँ एक ही वस्तु है, एक पुद्गल ही है। और जैसा भगवान के वहाँ है वैसा मुझे बरतता है और वह मैं आपको सिखाता हूँ।

पर ये तो लोग सब इसमें पड़े हैं, सब्जेक्ट में पड़े हैं, इसलिए यह सारा ज्ञान चला गया। बाक़ी, भगवान के वहाँ ऐसा सत्य और असत्य है ही नहीं। यह तो विनाशी है सारा। यह तो एक ही वस्तु के दो भाग कर दिए हैं हम लोगों ने। इसलिए ये सब सत्य तो असत्य है। यह सत्य तो सामाजिक स्वभाव है। हाँ, सामाजिक रचना है। समाज में आमने-सामने दुःख नहीं हो, उसके लिए यह रचना की गई है।

प्रश्नकर्ता : वह भी रिलेटिव सत्य ही है न?

दादाश्री : हाँ, है रिलेटिव सत्य! पर उसमें सामाजिक रचना की है कि, 'भाई, यह सत्य नहीं माना जाएगा।' आपने लिया हो इसलिए आप ऐसा कहते हो कि, 'हाँ, मैंने लिया है।' और 'नहीं लिया' ऐसा बोलो तो?! सत्य मतलब क्या? कि जैसा हुआ हो वैसा कहो मतलब समाज ने रचना की है यह, सत्य का स्वीकार किया इस तरह से!

प्रश्नकर्ता : आम खाया और मीठा लगा, तो वह सत्य घटना कहलाएगी न?

दादाश्री : नहीं, वह सत्य घटना नहीं है, वैसे असत्य भी नहीं है। वह रिलेटिव सत्य है, रियल सत्य नहीं है। रिलेटिव सत्य मतलब जो सत्य घड़ीभर बाद नाश होनेवाला है। इसलिए उस सत्य को सत्य ही नहीं कह सकते न! सत्य तो स्थायी होना चाहिए।

देवी-देवताओं की सत्यता

कोई कहेगा, 'ये शासन देवियाँ, वह सब बिलकुल सत्य है?' नहीं, वह रियल सत्य नहीं है, रिलेटिव सत्य है। मतलब कल्पित सत्य है। जैसे ये सास और ससुर और जमाई वह सब काम चलता है न, वैसे ही वह (देवी-देवताओं के साथ का) व्यवहार चलता है, जब तक यहाँ संसार में हैं और संसार सत्य माना गया है, रोंग बिलीफ़ ही राइट बिलीफ़ मानी गई है, तब तक उनकी ज़रूरत पड़ेगी।

स्वरूप, संसार का और आत्मा का...

यह संसार, वह तो कोई ऐसी-वैसी वस्तु नहीं है, आत्मा का विकल्प है। खुद कल्प स्वरूप और यह संसार वह विकल्प स्वरूप है! दो ही हैं। तो विकल्प कोई निकाल देने जैसी वस्तु नहीं है। यह विकल्प मतलब रिलेटिव सत्य है और कल्प वह रियल सत्य है।

तो इस संसार का जाना हुआ सारा ही कल्पित सत्य है। ये सभी बातें हैं न, वे सब कल्पित सत्य हैं। पर कल्पित सत्य की ज़रूरत है, क्योंकि स्टेशन जाना हो तो बीच में जो बोर्ड है वह कल्पित सत्य है। पर उस बोर्ड के आधार पर हम पहुँच सकते हैं न? फिर भी वह कल्पित सत्य है, वास्तव में सत्य नहीं है वह। और वास्तविक सत्य जानने के बाद कुछ भी जानने को नहीं रहता और कल्पित सत्य को जानने का अंत ही नहीं आता। अनंत जन्मों तक वह करते रहें तो भी उसका अंत नहीं आता।

कमी ने सर्जित किए स्थापित मूल्य

प्रश्नकर्ता : स्थापित मूल्य किसी गुणधर्म के कारण बने हैं?

दादाश्री : कमी के कारण! जिसकी कमी, उसकी बहुत क़ीमत! सही में गुण की कुछ पड़ी ही नहीं है। सोने के ऐसे खास गुण हैं ही नहीं, कुछ गुण हैं। पर कमी के कारण उसकी क़ीमत है। अभी खान में से सोना यदि खूब निकले न, तो क्या होगा? क़ीमत डाउन हो जाएगी।

प्रश्नकर्ता : सुख-दुःख, सत्य-असत्य, वे द्वंद्ववाली वस्तुएँ हैं। उन्हें भी स्थापित मूल्य ही कहा जाएगा न? जगत् में सच बोलना उसे क़ीमती माना है, झूठ बोलना अच्छा नहीं माना है।

दादाश्री : हाँ, वे सभी स्थापित मूल्य ही कहलाते हैं। उसके जैसी ही यह बात है। वह मूल्य और यह मूल्य एक ही है। यदि मानते हो कि 'यह सच्चा है और यह झूठा है' वे सब स्थापित मूल्य ही माने जाते हैं। वह सभी अज्ञान का ही काम है। और वह इस भ्रांत स्वभाव से निश्चितहुआ है! वह सब भ्रांत स्वभाव का न्याय है। किसी भी स्वभाव में न्याय तो होता है न! इसलिए यह स्थापित मूल्य सारे अलग प्रकार के हैं।

अर्थात् यह 'सत्य-असत्य' सब व्यवहार तक ही है।

भगवान की दृष्टि से...

इस व्यवहार सत्य, रिलेटिव सत्य के दुराग्रह का सेवन नहीं करना चाहिए। वह मूल स्वभाव से ही असत्य है। रिलेटिव सत्य किसे कहा जाता है? कि समाज व्यवस्था निभाने के लिए पर्याप्त सत्य! समाज के लिए पर्याप्त सत्य, वह भगवान के वहाँ सत्य नहीं है। तो भगवान से हम पूछें कि, 'भगवान, यह इतना अच्छा काम कर रहा है।' तब भगवान कहते हैं, 'वह अपना फल भोगेगा और यह अपना फल भोगेगा। जैसा बोए वैसा फल भोगेगा। मुझे कोई लेना-देना नहीं है। आम बोएगा तो आम और दूसरा बोएगा तो दूसरा मिलेगा!'

प्रश्नकर्ता : इस तरह से क्यों? भगवान को इसमें थोड़ा तो फर्क करना चाहिए न?

दादाश्री : फर्क करे तो वह भगवान ही नहीं है। क्योंकि भगवान के वहाँ ऐसी ये दोनों वस्तुएँ एक समान ही हैं।

प्रश्नकर्ता : पर व्यवहार में यदि ऐसा करने जाएँ तो फिर अनर्थ हो जाए।

दादाश्री : व्यवहार में नहीं करते ऐसा। पर भगवान के वहाँ ऐसे अलग नहीं है। भगवान तो दोनों को एक समान देखते हैं। भगवान को एक पर भी पक्षपात नहीं है। हाँ, कैसे समझदार भगवान हैं! समझदारीवाले हैं न?!

अपने यहाँ तो दिवालिया व्यक्ति भी होता है और बड़ा श्रीमंत व्यक्ति भी होता है। अपने यहाँ दिवालिये का लोग फज़ीता करते रहते हैं और श्रीमंत के बखान करते रहते हैं। भगवान वैसे नहीं हैं। भगवान के लिए दिवालिये भी एक समान और श्रीमंत भी एक समान। दोनों को समान रिज़र्वेशन देते हैं!

प्रश्नकर्ता : हम किस तरह निश्चित रूप से कह सकते हैं कि भगवान ने दोनों को समान रूप से ही देखा है?!

दादाश्री : क्योंकि भगवान द्वंद्वातीत हैं, इसलिए द्वंद्व को एक्सेप्ट नहीं करते हैं। द्वंद्व, वह संसार चलाने का साधन है और भगवान द्वंद्वातीत हैं। इसलिए उस प्रकार से हम कह सकते हैं कि भगवान इसमें दोनों ही एक्सेप्ट नहीं करते हैं।

व्यवहार को जो सच मानकर रहे, उन्हें प्रेशर और हार्ट अटेक और ऐसा सब हो गया और व्यवहार को झूठा मानकर रहे वे तगड़े हो गए। दोनों किनारेवाले लटक गए। व्यवहार में रहते हुए हम वीतराग हैं!

सत्य खड़ा है असत्य के आधार पर...

प्रश्नकर्ता : सत्य, झूठ के आधार पर है, वह किस प्रकार से?

दादाश्री : सत्य पहचाना किस तरह जाए? झूठ है तो सत्य पहचाना जाता है।

इसलिए यह सत्य तो असत्य के आधार पर खड़ा रहा है और असत्य का आधार है इसलिए वह सत्य भी असत्य ही है। यह जो बाहर सत्य कहलाता है न, उसका आधार क्या है? किसलिए वह सत्य कहलाता है? असत्य है इसलिए सत्य कहलाता है। उसे असत्य का आधार होने के कारण वह खुद भी असत्य है।

परम सत् की प्राप्ति का पुरुषार्थ

प्रश्नकर्ता : उस परम सत्य को प्राप्त करने के लिए मनुष्य को क्या पुरुषार्थ करना चाहिए?

दादाश्री : दुनिया को जो सत्य लगता है वह सत्य आपको विपरीत लगेगा तब आप सत् की तरफ जाओगे। इसलिए कोई दो गालियाँ दे दे चंदूभाई को, तो मन में ऐसा होता है कि 'हमें यह सत् की ओर धक्का मारता है।' असत् की तरफ हरकोई धक्का मारता है, पर सत् की तरफ कौन धक्का मारे? इस दुनिया के लोगों का जो विटामिन है, वह परम सत् प्राप्त करने के लिए ज़हर-पोइज़न है। और इन लोगों का-दुनिया का जो पोइज़न है वह परम सत् प्राप्त करने के लिए विटामिन है। क्योंकि दोनों की दृष्टि अलग है, दोनों का तरीका अलग है, दोनों की मान्यताएँ अलग हैं।

प्रश्नकर्ता : कई लोग अलग-अलग रास्ते बताते हैं कि 'जप करो, तप करो, दान करो।' तो दूसरे लोग कोई नकारात्मक रास्ता बताते हैं कि 'यह नहीं करो, वह नहीं करो।' तो इनमें से सच्चा क्या है?

दादाश्री : यह जप-तप-दान, वह सब सत्य कहलाता है और सत्य मतलब विनाशी! और यदि आपको परम सत्य चाहिए तो वह सत् है और वह सत् अविनाशी होता है। सत् का ही अनुभव करने की ज़रूरत है। जो विनाशी है, उसका अनुभव बेकार है।

प्रश्नकर्ता : तो परम सत्य की प्राप्ति किस तरह होती है?

दादाश्री : 'मैं क्या हूँ' वह भान नहीं, परन्तु 'मैं हूँ ही' ऐसा भान हो, तब फिर परम सत्य की प्राप्ति होने की शुरूआत हो गई। यह तो 'मैं हूँ' वह भी भान नहीं है। यह तो 'डॉक्टर साहब मैं मर जाऊँगा' कहते हैं! 'मैं क्या हूँ' वह भान होना, वह तो आगे की बात है, पर 'मैं हूँ ही, अस्तित्व है ही मेरा', ऐसा भान हो तो वह परम सत्य की प्राप्ति की शुरूआत हुई। अस्तित्व तो है, अस्तित्व का स्वीकार किया है, पर अभी भान नहीं हुआ। अब खुद को खुद का भान होना वह परम सत्य की प्राप्ति हो गई।

'मैं चंदूभाई हूँ' ऐसी मान्यता है, तब तक परम सत्य प्राप्त ही नहीं हो सकता। 'चंदूभाई तो मेरा नाम है और मैं तो आत्मा हूँ' ऐसी प्राप्ति हो, आत्मा का भान हो तो परम सत्य प्राप्त होता है।

'मैं तो आत्मा' वही सत्

अब खरा सत् कौन-सा है? आप आत्मा हो, अविनाशी हो वह खरा सत् है! जिसका विनाश नहीं होता वह खरा सत् है। जो भगवान हैं, वे सत् ही कहलाते हैं। बाक़ी, दुनिया ने सत् देखा ही नहीं है। सत् की तो बात ही कहाँ हो! और यह जो सत्य है वह तो असत्य ही है आख़िर में। इस संसार के सभी जो नाम दिए हुए हैं वे सारे ही सत्य हैं, पर विनाशी हैं।

अब 'चंदूभाई' वह व्यवहार में सच है, वह सत्य है पर भगवान के वहाँ असत्य है, किसलिए? खुद अनामी है। जब कि ये 'चंदूभाई' वे नामी हैं, इसलिए उनकी अर्थी निकलनेवाली है। पर अनामी की अर्थी नहीं निकलती। नामवाले की अर्थी निकलती है। अनामी की अर्थी निकलती है? इसलिए यह सत्य व्यवहार के लिए ही सत्य है। फिर वह असत्य हो जाता है।

'मैं चंदूभाई हूँ' वह नाम के आधार पर सच है, पर 'आप वास्तव में कौन हो?' उस आधार पर झूठ है। यदि आप वास्तव में कौन हो वह जान जाओ तो आपको लगेगा कि यह झूठ है। और

आप 'चंदूभाई' कब तक है? कि जब तक आपको 'ज्ञान' प्राप्त नहीं होता तब तक आप 'चंदूभाई' और 'ज्ञान' हो जाए, तब फिर लगता है कि 'चंदूभाई' भी असत्य है।

सत्य, भी कालवर्ती

सत्य, वह सापेक्ष है, पर जो सत् है, वह निरपेक्ष है, उसे कोई भी अपेक्षा लागू नहीं होती।

प्रश्नकर्ता : सत् और सत्य में दूसरा कोई फर्क होता होगा?

दादाश्री : सत्य विनाशी है और सत् अविनाशी है। दोनों स्वभाव से अलग हैं। सत्य, वह जगत् के लिए लागू होता है, व्यवहार को लागू होता है और सत्, वह निश्चय को लागू होता है। इसलिए इस व्यवहार को जो सत्य लागू होता है, वह विनाशी है। और सच्चिदानंद का सत् वह अविनाशी है, परमानेन्ट है। बदलता ही नहीं, सनातन है। जब कि सत्य तो बार-बार बदलता रहता है, उसे पलटते देर नहीं लगती।

प्रश्नकर्ता : इसलिए सत्य आपकी दृष्टि में सनातन नहीं है?

दादाश्री : सत्य, वह सनातन वस्तु नहीं है, सत् सनातन है। यह सत्य तो काल के आधीन बदलता जाता है।

प्रश्नकर्ता : वह किस तरह से? ज़रा समझाइए।

दादाश्री : काल के अनुसार सत्य बदलता है। भगवान महावीर के काल में यदि कभी मिलावट की होती न, तो लोग मार-मारकर उसे जला देते। और अभी? यह जमाना ऐसा आया है न, तो सब तरफ मिलावटवाला ही मिलता है न?! इसलिए यह सब सत्य बदलता रहनेवाला है। जिसे पहले के लोग क़ीमती वस्तु मानते थे, उसे हम बेकार कहकर निकाल देते हैं। पहले के लोग जिसे सत्य मानते थे उसे असत्य कहकर निकालते हैं। इसलिए हरएक काल में सत्य बदलता ही रहता है। इसलिए वह सत्य कालवर्ती है, सापेक्ष सत्य है और फिर विनाशी है। जब कि सत् मतलब अविनाशी।

सत् का स्वभाव

प्रश्नकर्ता : सत्-चित्-आनंद जो शब्द है उसमें सत् है वह सत्य है या सत्? और यह सत्य अलग है?

दादाश्री : यह सत्य तो अलग ही बात है। इस जगत् में जो सत्य कहा जाता है, वह बिलकुल अलग ही बात है। सत् का अर्थ ही यह है कि जो अविनाशी हो। अविनाशी हो और साथ-साथ गुण-पर्याय सहित हो और अगुरु-लघु स्वभाववाला हो। अगुरु-लघु मतलब पूरण नहीं होता, गलन नहीं होता, बढ़ता नहीं है, घटता नहीं है, पतला नहीं हो जाता, वह सत् कहलाता है। आत्मा वह सत् है। फिर पुद्गल भी सत् है। मूल जो पुद्गल है परमाणु स्वरूप, वह सत् है, वह विनाशी नहीं है। उसमें पूरण-गलन नहीं होता है। सत् कभी भी पूरण-गलन स्वभाववाला नहीं होता। और जहाँ पूरण-गलन है वह असत् है, विनाशी है। देयर आर सिक्स इटर्नल्स इन दिस ब्रह्मांड! (ब्रह्मांड में ऐसे छह शाश्वत तत्व हैं।) ' तो इन इटरनल्स को सत् शब्द लागू होता है। सत् अविनाशी होता है और सत् का अस्तित्व है, वस्तुत्व है और पूर्णत्व है। उत्पाद-व्यय-ध्रौव है, वहाँ सत् है!! हमें इस संसार में समझने के लिए सत् कहना हो तो आत्मा, वह सत् है, शुद्ध चैतन्य वह सत् है। सिर्फ शुद्धात्मा ही नहीं है, परन्तु दूसरे पाँच तत्व हैं। पर वे अविनाशी तत्व हैं। उन्हें भी सत् कहा जाता है। जिनका त्रिकाल अस्तित्व है, वह सारा सत् कहलाता है और ऐसे व्यवहारिक भाषा में सत्य जो कहलाता है, वह तो उस सत्य की अपेक्षा असत्य कहलाता है। वह तो घड़ीभर में सत्य और घड़ी में असत्य!

सच्चिदानंद और सुंदरम्

यह सच्चिदानंद का सत् वह सत् है। सत्-चित्-आनंद (सच्चिदानंद) उसमें जो सत् है, वह इटरनल (शाश्वत) सत् है और यह सत्य, व्यवहारिक सत्य, वह तो भ्रांति का सत्य है।

क्या जगत् मिथ्या???

इसलिए आपको जो बातचीत करनी हो वह करो, सभी खुलासे

कर दूँगा। अभी तक जो जानते हो, वह जाना हुआ ज्ञान भ्रांतिज्ञान है। भ्रांतिज्ञान मतलब वास्तविकता नहीं है उसमें। यदि वास्तविकता होती तो अंदर शांति होती, आनंद होता। भीतर आनंद का धाम है पूरा! पर वह प्रकट क्यों नहीं होता? वास्तविकता में आए ही नहीं हैं न! अभी तो 'फ़ॉरेन' को ही 'होम' मानते हैं। 'होम' तो देखा ही नहीं है।

यहाँ सब पूछा जा सकता है, अध्यात्म संबंधी इस वर्ल्ड की कोई भी चीज़ पूछी जा सकती है। मोक्ष क्या है, मोक्ष में क्या है, भगवान क्या है, किस प्रकार यह सब क्रियेट हुआ, हम क्या हैं, बंधन क्या है, कर्त्ता कौन, किस प्रकार जगत् चलता है, वह सब यहाँ पूछा जा सकता है। मतलब कुछ बातचीत करो तो खुलासा हो। यह जगत् क्या है? यह सब दिखता है, वह सब सच है, मिथ्या है या झूठ है?

प्रश्नकर्ता : झूठ है।

दादाश्री : झूठ कह ही नहीं सकते! झूठ किस तरह कह सकते हैं? यह तो किसीकी बेटी को यहाँ से कोई उठाकर ले जाता हो तो गलत कहेंगे। पर अपनी बेटी को उठाकर ले जा रहा हो उस समय? गलत कहलाएगा ही किस तरह?! तो यह जगत् सच होगा या मिथ्या होगा?

प्रश्नकर्ता : जगत् को तो मिथ्या कहा है न!

दादाश्री : मिथ्या नहीं है जगत्! यह कोई मिथ्या होता होगा? जगत् मिथ्या होता तो हर्ज ही क्या था? तो आराम से चोर को कहते कि, 'कोई हर्ज नहीं, यह तो मिथ्या ही है न!' यह रास्ते पर एक भी पैसा पड़ा हुआ दिखता है? लोगों के पैसे नहीं गिरते होंगे? सभी के पैसे गिरते हैं। पर तुरन्त उठा ले जाते हैं। वहाँ पर रास्ता कोरा का कोरा! इसलिए यह सोचना चाहिए इस तरह से। इस जगत् को मिथ्या कैसे कह सकते हैं?! यह पैसा कभी भी रास्ते में पड़ा हुआ नहीं रहता, सोने की कोई वस्तु, कुछ भी पड़ा हुआ नहीं रहता। अरे, झूठे सोने का हो तो भी उठा ले जाते हैं।

इसलिए मिथ्या कुछ है ही नहीं। मिथ्या तो, पराये की लाख

रुपये की जेब कट जाए न, तब कहेगा, 'अरे जाने दो न, ब्रह्म सत्य-जगत् मिथ्या है!' और तेरे खुद के जाएँ तब पता चलेगा मिथ्या है या नहीं, वह! यह तो सब दूसरों की जेबें कटवाई हैं लोगों ने, ऐसे वाक्यों से। वाक्य तो एक्ज़ेक्ट होना चाहिए, मनुष्य को फिट हो जाए ऐसा होना चाहिए। आपको नहीं लगता कि फिट हो वैसा वाक्य होना चाहिए?

प्रश्नकर्ता : हाँ, ठीक है।

दादाश्री : ये सुख सारे सत्य नहीं लगते?

प्रश्नकर्ता : लगते हैं।

दादाश्री : मिथ्या होते तो कभी का छोड़ देता और भाग जाता। और यही सत्यता का प्रमाण है। इसीलिए तो ये लोग इसमें मज़े करते हैं। ये तो जलेबी खा गया हो न तो भी स्वाद आता है और लोग ये आम नहीं खाते होंगे? तब यह कोई बनावट है?

फिर यह मृगतृष्णा के जल जैसा भी नहीं है यह जगत्। लोगों ने कहा, 'मृगतृष्णा के जल जैसा है!' पर ओहोहो! यह तो करेक्ट है। अंदर जलन होती है न, तो सारी रात नींद नहीं आती कितनों को तो!

इसलिए इस जगत् को कहीं मिथ्या कहा जाता होगा? 'मिथ्या' कहें तो हम मानेंगे? रात को सो गया हो, मुँह थोड़ा खुला हो, और मुँह में थोड़ी मिर्ची डाल दें, तो हमें उठाना पड़ेगा? मिथ्या हो न, तब जगाना पड़े। पर यह तो अपने आप ही जग जाता है न!

यह तो दूसरों के घर पर कहेगा, 'शांत रहो, भाई। वह तो बेटा मर जाता है, इसमें शांत रहो।' और उसके घर बेटा मर जाए तब?! खुद के घर बेटा मर जाए तब मिथ्यात्व दिखाओ न आप! यह तो किसीके बच्चे मर जाएँ तब मिथ्या(!) कहेगा तब, यह जगत् मिथ्या है, वह बात सच है? यह तो दूसरों के घर मिथ्या, हं! तेरे घर तो रोता है फिर! चुप करवाएँ तब कहेगा, 'भाई, मुझे तो सारी रात भुलाए नहीं जाते।' अरे, तू मिथ्या कह रहा था न?! वहाँ पर 'ब्रह्म सत्य-जगत् मिथ्या' बोल न! या फिर अभी एक भाई और उनकी पत्नी,

दोनों साथ में जा रहे हों और कोई व्यक्ति आकर उसकी पत्नी को उठा जाए, उस घड़ी वह पति 'मिथ्या है, मिथ्या है' बोलेगा? क्या बोलेगा? सत्य मानकर ही व्यवहार करेगा न? या 'मिथ्या है, मिथ्या है, ले जा' ऐसा कहेगा?!

जगत्, रिलेटिव सत्य

'ब्रह्म सत्य और जगत् मिथ्या' वह बात हंड्रेड परसेन्ट रोंग है। जगत् मिथ्या, वह बात गलत है।

प्रश्नकर्ता : सत्य और मिथ्या कहा, इसमें सत्य, सत्य किस तरह से है। और मिथ्या, मिथ्या किस तरह से है?

दादाश्री : हाँ, तो यह जगत् मिथ्या होता नहीं है कभी भी। ब्रह्म भी सत्य है और जगत् भी सत्य है। ब्रह्म वह रियल सत्य है और जगत् वह रिलेटिव सत्य है। बस, उतना ही फर्क है। ब्रह्म अविनाशी करेक्ट है और जगत् विनाशी करेक्ट है। दोनों की करेक्टनेस में कोई कमी नहीं है।

जगत् भी सत्य है, वैसा पद्धतिपूर्वक कहना चाहिए न? जिस बात को बाद में कोई काट दे वह किस काम की? 'ब्रह्म रियल सत्य है और जगत् रिलेटिव सत्य है' उसे कोई काट नहीं सकता, एट एनी टाइम (किसी भी समय)!!

नहीं है यह प्रतिभासित सत्य

प्रश्नकर्ता : संसार जो है वह प्रतिभासित सत्य है, बाक़ी तो सर्वत्र ब्रह्म ही है, ऐसा कहते हैं न?

दादाश्री : सर्वत्र ब्रह्म भी नहीं है और प्रतिभासित सत्य भी नहीं है यह तो। यह संसार तो रिलेटिव सत्य है। यह वाइफ, वह प्रतिभासित सत्य है? अरे... कंधे पर हाथ रखकर सिनेमा देखने जाते हैं न! एक बच्चा भी साथ में होता है, इसलिए यह रिलेटिव सत्य है, यह गप्प नहीं है। प्रतिभासित नहीं है यह। प्रतिभासित तो किसे कहा जाता है? हम

तालाब में देखें और मुँह दिखे वह प्रतिभासित कहलाता है। यह तो सारा भ्रांति की आँखों से सब दिखता है और वह पूरा गलत नहीं है। व्यवहार है। यह व्यवहार से सत्य है और आत्मा रियल सत्य है। यह सारा व्यवहार रिलेटिव सत्य है, इसलिए यह दिखता है वह भ्रांति नहीं है, यह मृगतृष्णा नहीं है। आप आत्मा हो वह रियल सत्य है, वह सनातन है।

मिथ्या मानें तो भगवान की भक्ति होगी?! भक्ति भी मिथ्या हो गई(!) इसलिए जगत् मिथ्या है, वह बात ही गलत है। यानी लोग उल्टा समझे हैं। उन्हें सही बात समझानी चाहिए न?! यह भी सत्य है पर रिलेटिव सत्य है।

प्रश्नकर्ता : कहते हैं न कि जगत् पूरा सोने का हो जाए, पर हमारे लिए तृणवत् है?!

दादाश्री : तृणवत् तो है, पर तृणवत् वह अलग दशा है।

प्रश्नकर्ता : सकल जगत् को झूठन कहा है वह?

दादाश्री : झूठन वह भी किसी खास दशा में। जगत् झूठन जैसा भी नहीं कहलाता। हम जगत् को जैसा है वैसा ही कहते हैं।

एक व्यक्ति ने मुझे कहा कि, 'आप इस जगत् को रिलेटिव सत्य क्यों कहते हैं? पहले के शास्त्रकारों ने इस जगत् को मिथ्या कहा है न!' तब मैंने कहा, 'वह जो मिथ्या कहा है वह साधु-आचार्यों के लिए कहा है, त्यागियों के लिए कहा है।' यानी वे संसारियों से नहीं कहते, साधकों से कहते हैं। उसे इन व्यवहार के संसारियों ने पकड़ लिया है। अब यह भूल ही हो जाती है न! लोग उल्टा समझे। लोग तो चुपड़ने की दवाई पी जाएँ वैसे हैं। जिन्होंने यह दवाई रखी होगी, यह शब्द उस अपेक्षा से कहा हुआ है। त्यागी लोगों को त्याग करने के लिए अपेक्षा से कहा हुआ है। अब चुपड़ने की दवाई पी जाएँ तो क्या होगा? खतम हो जाएँगे, सीधा हो जाएगा!

और 'जगत् मिथ्या' कहें, तब साधकों की इसमें से रुचि खतम हो जाती है और आत्मा की तरफ उनका चित्त रहा करता है। इसलिए

'मिथ्या' कहा है। वह तो एक 'हैल्पिंग प्रोब्लेम' (समस्याओं में सहायता करनेवाला) है। वह कोई वास्तव में एक्ज़ेक्टनेस नहीं है।

तो ही सत्य के मिलें स्पष्टीकरण

इसलिए हमने सत्य, रिलेटिव सत्य और मिथ्या ऐसे तीन भाग किए हैं। जब कि जगत् ने दो ही भाग किए हैं, सत्य और मिथ्या। तो दूसरा भाग लोगों को एक्सेप्ट होता नहीं है न! 'चंदूभाई ने मेरा बिगाड़ा' इतना ही सुनने में आया हो, अब कहनेवाला भूल गया हो बाद में, पर आपको यह बात रात को परेशान करती है। उसे मिथ्या कैसे कहा जाए? और दीवार को हम पत्थर मारें और फिर हम सो जाएँ, तब भी दीवार को कुछ नहीं होता। इसलिए हमने तीन भाग किए कि एक सत्य, रिलेटिव सत्य और मिथ्या! तो उसका स्पष्ट ब्यौरा मिल जाता है। नहीं तो स्पष्टीकरण ही नहीं हो न! यह तो सिर्फ आत्मा को ही सत्य कहें तो यह जगत् क्या बिलकुल असत्य ही है? मिथ्या है यह? इसे मिथ्या किस प्रकार कहा जाए?!

यदि मिथ्या है तो अंगारों में हाथ डालकर देखो। तब तुरन्त ही पता चल जाएगा कि 'मिथ्या है या नहीं?!' जगत् रिलेटिव सत्य है। यह जिसका रोना आता है, दुःख होता है, जिससे जल जाते हैं, उसे मिथ्या कैसे कहा जाए?!

प्रश्नकर्ता : जगत् मिथ्या यानी इल्युज़न नहीं है?

दादाश्री : इल्युज़न (भ्रम) है ही नहीं जगत्! जगत् है, पर सापेक्षित सत्य है। हम इस दीवार को मारें और मनुष्य को मारें उसमें फर्क पड़ जाएगा। दीवार को मिथ्या कहना हो तो कह सकते हैं। लपटें उठती हुई दिखती हैं पर फिर दाग़ नहीं पड़ा हो, वह इल्युज़न कहलाता है। 'मिथ्या' कहकर तो सब बिगाड़ दिया है। जिसके आधार पर जगत् चलता है, उसे मिथ्या कहा ही किस प्रकार जाए?! यह जगत् तो आत्मा का विकल्प है। यह कोई ऐसी-वैसी वस्तु नहीं है। उसे मिथ्या किस तरह से कह सकते हैं?!

सुख का सेलेक्शन

यह रिलेटिव सत्य टिकनेवाला नहीं है। जिस तरह यह सुख टिकनेवाला नहीं है, उसी तरह यह सत्य भी टिकनेवाला नहीं है। यदि आपको टिकाऊ चाहिए तो 'उस' तरफ जाओ और काम-चलाऊ चाहिए, काम-चलाऊ में आराम से रहने की जिसे आदत हो गई हो, वे इसमें रहें। क्या बुरा कहते हैं? वे तो ज्ञानियों के शब्द हैं कि भई, यह तो नाशवंत है और इसमें बहुत हाथ मत डालना, इसमें बहुत रमणता मत करना। ऐसे हेतु से यह सब कहा गया है। इसलिए आपको काम-चलाऊ सुख चाहिए तो रिलेटिव सत्य में ढूंढो और शाश्वत सुख चाहिए तो रियल सत्य में ढूंढो! आपको जैसा शौक हो वैसा करो।

आपको विनाशी में रहना है या रियल में रहना है?

प्रश्नकर्ता : रियल में रहना है।

दादाश्री : ऐसा?! यानी हमारा विज्ञान कहता है कि ब्रह्म भी सत्य है और जगत् भी सत्य है। जगत् विनाशी सत्य है और ब्रह्म अविनाशी सत्य है। सभी सत्य ही है। सत्य से बाहर तो कुछ चलता ही नहीं न! आपको जब तक विनाशी पसंद हो, वह पुसाता हो, तब तक वह भी सत्य है, आप उसमें बैठो और वह विनाशी पसंद नहीं आए और आपको सनातन सुख चाहिए तो अविनाशी में आओ।

विश्व में 'सत्' वस्तुएँ...

इसलिए अभी तक जो भी जाना था, वह लौकिक था। लोगों का माना हुआ, वह लौकिक कहलाता है और वास्तविक अलौकिक कहलाता है। तो आपको वास्तविक जानना है या लौकिक जानना है?

प्रश्नकर्ता : वास्तविक।

दादाश्री : ऐसा है, अविनाशी छः तत्वों से यह जगत् बना हुआ है।

प्रश्नकर्ता : पर पाँच तत्व हैं न?

दादाश्री : कौन-कौन से?

प्रश्नकर्ता : पृथ्वी, जल, आकाश, तेज और वायु।

दादाश्री : वह आकाश तत्व तो अविनाशी है और पृथ्वी, जल, वायु और तेज विनाशी हैं। वे चार मिलकर एक तत्व होता है, वह तत्व वापिस अविनाशी है। जिसे पुद्‌गल परमाणु कहा गया है। वह अविनाशी है और परमाणु रूपी हैं। इसलिए ये जो चार तत्व पृथ्वी, जल, वायु और तेज हैं, वे रूपी हैं। इसलिए आपने जो पाँच तत्व कहे हैं न, वो तो दो ही तत्व हैं। इस दुनिया में इन पाँच तत्वों को मानते हैं और आत्मा को छठ्ठा तत्व मानते हैं, ऐसा नहीं है। यदि ऐसा होता तब तो कब से ही सारा निकाल हो गया होता।

प्रश्नकर्ता : मतलब आपका अभिप्राय ऐसा है कि विश्व में मूल छह तत्व हैं!

दादाश्री : हाँ, छह तत्व हैं और यह जगत् ही छह तत्वों का बना हुआ है। यह अंतिम बात कह रहा हूँ। आगे छानने जैसी यह बात नहीं है। यह बुद्धि की भी बात नहीं है। यह बुद्धि से बाहर की बात है, इसलिए यह छानने जैसी वस्तु नहीं है। यह हमेशा के लिए, परमानेन्ट लिख लेना हो तो लिख सकते हैं, कोई परेशानी नहीं होगी। दूसरी सभी विकल्पी बातें हैं और वह किसी ने यहाँ तक का देखा तो वहीं तक का लिखवाया, किसीने उससे आगे का देखा तो वहाँ तक का लिखवाया। पर यह तो संपूर्ण देखने के बाद का दर्शन है, और वीतरागों का दर्शन है यह!

महाव्रत भी व्यवहार सत्य ही(?)

प्रश्नकर्ता : शास्त्रकारों ने सत्य को महाव्रत में रखा है न! तो वह सत्य कौन-सा कहलाता है?

दादाश्री : व्यवहार सत्य! निश्चय से सब झूठ!!

प्रश्नकर्ता : तो सत्य महाव्रत में इन लोगों ने क्या क्या समाविष्ट किया है?

दादाश्री : जो सत्य माना जाता है उसे, और असत्य हो वह दु:खदायी होता है लोगों को।

संसार के धर्म, नहीं है वह मोक्ष की पटरी?

ऐसा है न, यह सत्य-असत्य, वह चीज़ ही मोक्ष के लिए नहीं है। वह तो संसारमार्ग में बताया है कि यह पुण्य और पाप, ये सब साधन हैं। पुण्य करोगे तो किसी दिन मोक्षमार्ग की तरफ जाया जाएगा। मोक्षमार्ग कीतरफ किस तरह जाया जाए? घर में बैठे-बैठे खाने का मिलेगा तोमोक्षमार्ग की तरफ जाएँगे न? सारा दिन मेहनत करने में पड़े हों, तोमोक्ष का किस तरह कर पाएँगे?! इसलिए पुण्य का बखान किया हैइन लोगों ने। बाक़ी मोक्षमार्ग तो सहज है, सरल है, सुगम है। संसारीमार्ग रिलेशन की कड़ीवाला है और यहाँ मोक्षमार्ग में 'नो रिलेशन'!

प्रश्नकर्ता : तो संसार के सभी धर्म पाले हों तो भी उसे मोक्ष की लिंक मिलने का ठिकाना ही नहीं न?

दादाश्री : मोक्ष की बात ही नहीं करनी! इस अज्ञान की जितनी स्लाइस करें वे सारी ही उजाले के रूप में नहीं होती। एक भी स्लाइस उजालेवाली नहीं आती, नहीं?

प्रश्नकर्ता : ना।

दादाश्री : इस आलू की स्लाइसेस करें, उसमें कोई प्याज़ की आती है?

प्रश्नकर्ता : नहीं। सभी आलू की ही स्लाइस निकलती हैं।

दादाश्री : उसी तरह ये लोग स्लाइसेस करते रहते हैं कि 'अब उजाला आएगा, अब उजाला आएगा...' अरे, पर नहीं आएगा। यह तो अज्ञानता की स्लाइसेस! अनंत जन्मों तक सिरफोड़ी करके मर जाएगा, उल्टे सिर लटककर देह को गला देगा तो भी कुछ होगा नहीं। वह तो मार्ग को जिन्होंने प्राप्त किया है वे ही तुझे यह मार्ग प्राप्त

करवाएँगे, जानकार होंगे, वे मार्ग प्राप्त करवाएँगे। जानकार तो हैं नहीं। उल्टे खोए जाने के जानकार हैं, वे आपको भी रास्ता भुला देंगे!!

क्या सत्य? क्या असत्य?

प्रश्नकर्ता : सच्चे और झूठे में कितना फर्क है?

दादाश्री : आपने किसीको पाँच सौ रुपये दिए हों और फिर पूछो कि, 'मैंने आपको रुपये दिए थे' और वह झूठ बोले कि 'नहीं दिए', तो आपको क्या होगा? हमें दु:ख होगा या नहीं होगा?

प्रश्नकर्ता : होगा।

दादाश्री : तो हमें पता चलेगा न, कि झूठ खराब है, दु:खदायी है?

प्रश्नकर्ता : हाँ, ठीक है।

दादाश्री : और सच बोले तो सुखदायी लगता है न? इसलिए सच्ची वस्तु खुद को सुख देगी और झूठी वस्तु दु:ख देगी। इसलिए सच की क़ीमत तो होगी न? सच्चे की ही क़ीमत है। झूठ की क्या क़ीमत?! झूठा दु:खदायी होता है!

उसमें भी सत्य, हित, मित और प्रिय

हमें सत्य, हित, प्रिय और मित प्रकार से काम में लेना चाहिए। कोई ग्राहक आया तो उसे प्रिय लगे उस तरह से बात करनी चाहिए, उसे हितकारी हो ऐसी बातें करनी चाहिए। ऐसी चीज़ नहीं दें कि जो उसके लिए घर जाकर बेकार हो जाए। तब वहाँ पर हम उसे कहें कि, 'भाई, यह वस्तु आपके काम की नहीं है।' तब कोई कहेगा कि, 'ऐसा सच कह दें, तो हम व्यापार किस तरह करेंगे?' अरे, तू जीवित किस आधार पर है? कौन-से हिसाब से तू जी रहा है? जिस हिसाब से तू जी रहा है उसी हिसाब से व्यापार चलेगा। कौन-से हिसाब से ये लोग सुबह उठते होंगे? रात को सो गए, और मर गए तो?! कई लोग ऐसे सुबह फिर उठे नहीं थे! वह किस आधार पर? इसलिए

डरने की ज़रूरत नहीं है। प्रामाणिकता से व्यापार करना। फिर जो हो वह ठीक है पर हिसाब शुरू मत करना।

सच्चे को ऐश्वर्य मिलता है। जैसे-जैसे सत्यनिष्ठा और वे सभी गुण हों न, वैसे-वैसे ऐश्वर्य उत्पन्न होता है। ऐश्वर्य मतलब क्या कि हरएक वस्तु उसे घर बैठे मिले।

उसका विश्वास कौन करे?

दादाश्री : झूठ कभी बोलता है?

प्रश्नकर्ता : बोलता हूँ।

दादाश्री : काफ़ी बोलता है!

प्रश्नकर्ता : नहीं, कम बोलता हूँ।

दादाश्री : कम बोलता है। झूठ बोलने से क्या नुकसान होता होगा? विश्वास ही उठ जाता है अपने ऊपर से। विश्वास बैठता ही नहीं न!

प्रश्नकर्ता : सामनेवाले को पता नहीं चलता, ऐसा समझकर बोलते हैं।

दादाश्री : हाँ, ऐसा बोलते हैं, पर विश्वास उठ जाता है।

एक बार तुझे बोरीवली स्टेशन पर भेजा हो, और तेरा दोस्त मिला और बैठ गया, गप्प लगाने लगा। तुझे कहा हो कि तू जा, दादा को देख आ, आए या नहीं, पाँच बजे आनेवाले थे, तब तू आकर कहे, कि ये दादा तो आए नहीं लगते हैं। पर सत्संग में यदि मैं आया हुआ होऊँ और वह सबको पता चल जाए तो फिर विश्वास उठ जाएगा। विश्वास उठ गया मतलब मनुष्य की क़ीमत खतम।

हम झूठ बोलते हैं, कोई अपने पास झूठ बोले तो हमें समझ जाना चाहिए कि यह व्यक्ति इतना झूठ बोलता है, तो मुझे इतना दु:ख होता है तो मैं किसीके पास झूठ बोलूँ तो उसे कितना दु:ख होगा? वह समझ में आता है न? या नहीं समझ आता?

... तो सिग्नल शक्ति चली जाती है

प्रश्नकर्ता : यह जो व्यापार करते हैं लोग, जेब काटने का या चोरी करने का, तो उसके अंदर का आत्मा कभी उसे सिग्नल देता होगा या नहीं देता होगा?

दादाश्री : एक-दो बार चोरी के सिग्नल देता है। आत्मा तो फिर बीच में पड़ता नहीं है इसमें। एक-दो बार सिग्नल भीतर से मिलते हैं कि 'नहीं करने जैसा है।' परन्तु पार कर जाए तो फिर कुछ भी नहीं। एक बार पार किया इसलिए वह सिग्नल शक्ति चली गई। ये सिग्नल पड़ा हो और गाड़ी पार करे तो सिग्नल की शक्ति चली गई। सिग्नल नहीं गिरा हो और पार करे वह बात अलग है।

प्रश्नकर्ता : सच्चे मनुष्य का हमेशा शोषण होता है और जो गलत मनुष्य हैं, वे गुंडागर्दी या गलत काम ही करते हैं, वे मौज-मज़े करते हैं, किसलिए?

दादाश्री : सच्चे मनुष्य तो जेब काटने जाते हैं न, तब तुरन्त ही पकड़े जाते हैं। और गलत व्यक्ति तो पूरी ज़िन्दगी करे तब भी पकड़ा नहीं जाता, मुआ। कुदरत मदद करती है उसे, और सच्चे मनुष्य की मदद नहीं करती, उसे पकड़वा देती है! उसका क्या कारण लगता है?

प्रश्नकर्ता : क्योंकि उससे गलत होता नहीं है इसलिए।

दादाश्री : ना, कुदरत की इच्छा ऐसी है कि उसे ऊँची गति में ले जाना है, इसलिए उसे पहले से ही ठोकर मारकर ठिकाने पर रखती है। और दूसरेवाले को नीची गति में ले जाना है। इसलिए उसकी मदद करती है। आपको समझ नहीं आया? खुलासा हुआ या नहीं? हो गया तब!

पुण्य-पाप, वहाँ इस तरह बँटते हैं

प्रश्नकर्ता : कितने ही झूठ बोलें तो भी सत्य में खप जाता है और कितने सच बोलें तो भी झूठ में खप जाता है। वह क्या पज़ल है?!

दादाश्री : वह उसके पाप और पुण्य के आधार पर होता है। उसके पाप का उदय हो तब वह सच्चा बोले तो भी झूठ में जाता है, जब कि पुण्य का उदय हो तब झूठ बोले तो भी लोग उसे सच्चा स्वीकारते हैं, चाहे जैसा झूठ करे तो भी चल जाता है।

प्रश्नकर्ता : तो उसे कोई नुकसान नहीं है?

दादाश्री : नुकसान तो है, पर आनवाले जन्म का। इस जन्म में तो उसे पिछले जन्म का फल मिला है। और यह झूठ बोला न, उसका फल उसे आनेवाले भव में मिलेगा। अभी उसने यह बीज रोपा है। बाक़ी, यह कोई अंधेर नगरी चौपट राजावाला राज नहीं है कि चाहे जैसा चले!

वहाँ अभिप्राय बदलो

अब आप पूरे दिन में एक भी कर्म बांधते हो क्या? आज क्या-क्या कर्म बांधा? जो बांधोगे वह आपको भोगना पड़ेगा। खुद की जिम्मेदारी है। इसमें भगवान की किसी प्रकार की जिम्मेदारी नहीं है।

प्रश्नकर्ता : हम झूठ बोले हों, वह भी कर्म ही बांधा कहा जाएगा न?

दादाश्री : बेशक! पर झूठ बोले हों न, उसके बदले झूठ बोलने का भाव करते हो, वह अधिक कर्म कहलाता है। झूठ बोलना वह तो मानो कि कर्मफल है। झूठ बोलने का भाव ही, झूठ बोलने का अपना निश्चय, वह कर्मबंध करवाता है। आपको समझ में आया? यह वाक्य कुछ हैल्प करेगा आपको? क्या हैल्प करेगा?

प्रश्नकर्ता : झूठ बोलना रुक जाना चाहिए।

दादाश्री : ना। झूठ बोलने का अभिप्राय ही छोड़ देना चाहिए। और झूठ बोला जाए तो पश्चाताप करना चाहिए कि, 'क्या करूँ?! ऐसे झूठ नहीं बोलना चाहिए।' पर झूठ बोला जाना बंद नहीं हो सकेगा परन्तु झूठ बोलने का अभिप्राय बंद होगा। 'अब आज से झूठ नहीं बोलूँगा, झूठ

बोलना, वह महापाप है। महा दु:खदायी है और झूठ बोलना वही बंधन है' ऐसा अभिप्राय यदि आपसे हो गया तो आपके झूठ बोलने के पाप बंद हो जाएँगे। और पूर्व में जब तक ये भाव बंद नहीं किए थे, तब तक जो उसके रिएक्शन हैं उतने बाक़ी रहेंगे। उतना हिसाब आपको आएगा। आपको फिर उतना अवश्य ही झूठ बोलना पड़ेगा, तो उसका पश्चाताप कर लेना। अब पश्चाताप करो, फिर भी वापिस जो झूठ बोले उस कर्मफल का भी फल तो आएगा। और वापिस वह तो भुगतना ही पड़ेगा। वे लोग आपके घर से बाहर जाकर आपकी बुराई करेंगे कि, 'क्या ये चंदूभाई, पढ़े-लिखे आदमी, ऐसा झूठ बोले?! उनकी यह काबलियत है?!' इसलिए बुराई का फल भोगना पड़ेगा वापिस, पश्चाताप करोगे तो भी। और जो पहले से झूठ का पानी बंद कर दिया हो, कॉज़ेज़ ही बंद कर दिए जाएँ, तो फिर कॉज़ेज़ का फल और फल का भी फल नहीं होगा।

इसलिए हम क्या कहते हैं? झूठ बोला गया, पर 'ऐसा नहीं बोलना चाहिए' ऐसा तू विरोधी है न? हाँ, तो यह झूठ तुझे पसंद नहीं ऐसा निश्चित हो गया कहलाएगा। झूठ बोलने का तुझे अभिप्राय नहीं है न, तो तेरी जिम्मेदारी का एन्ड आ जाता है।

प्रश्नकर्ता : पर जिसे झूठ बोलने की आदत पड़ गई हो, वह क्या करे?

दादाश्री : उसे तो फिर साथ-साथ प्रतिक्रमण करने की आदत डाल देनी पड़ेगी। और प्रतिक्रमण करे तो फिर जोखिमदारी हमारी है।

इसलिए अभिप्राय बदलो! झूठ बोलना जीवन के अंत के समान है। जीवन का अंत लाना और झूठ बोलना, वे दोनों एक समान हैं, ऐसा डिसाइड करना पड़ेगा। और फिर सत्य की पूँछ मत पकड़ना।

द्रव्य में झूठ, भाव में सत्य

प्रश्नकर्ता : यह व्यापार करते हैं, उसमें किसीसे कहें, 'तू मेरा माल काम में ले, तुझे उसमें से एक-दो प्रतिशत दूँगा।' वह गलत काम तो है ही न?

दादाश्री : गलत काम हो रहा है, वह आपको पसंद है या नहीं पसंद?

प्रश्नकर्ता : पसंद आना वह दूसरा प्रश्न है। पर नहीं पसंद हो तो भी करना पड़ता है, व्यवहार के लिए।

दादाश्री : हाँ, इसलिए जो करना पड़ता है, वह अनिवार्य है। तो इसमें आपकी इच्छा क्या है? ऐसा करना है या नहीं करना है?

प्रश्नकर्ता : यह करने की इच्छा नहीं है, पर करना पड़ता है।

दादाश्री : वह अनिवार्य रूप से करना पड़े, उसका पछतावा होना चाहिए। आधा घंटा बैठकर पस्तावा होना चाहिए, कि 'यह नहीं करना है फिर भी करना पड़ता है।' अपना पछतावा ज़ाहिर किया इसलिए हम गुनाह में से छूट गए। यह तो अपनी इच्छा नहीं होने पर भी जबरदस्ती करना पड़ता है, उसका प्रतिक्रमण करना पड़ेगा और कितने ही लोग कहते हैं, 'भाई, ये करते हैं वही ठीक है, ऐसा ही करना चाहिए।' तो उनको उल्टा पड़ेगा। ऐसा करके खुश हों वैसे भी इन्सान हैं न! यह तो आप हल्के कर्मवाले हैं इसलिए आपको यह पछतावा होता है। नहीं तो लोगों को पछतावा भी नहीं होता।

प्रश्नकर्ता : पर फिर से रोज़ तो वह गलत करने ही वाले हैं।

दादाश्री : गलत करने का प्रश्न नहीं है। यह पछतावा करते हो वही आपके भाव हैं। हो गया, वह हो गया। वह तो आज डिस्चार्ज है और डिस्चार्ज में किसीका चलता ही नहीं। डिस्चार्ज मतलब अपने आप स्वाभाविक रूप से परिणमित होना। और चार्ज मतलब क्या? कि खुद के भाव सहित होना चाहिए। कई लोग उल्टा करते हैं, फिर भी भाव में ऐसा ही रहता है कि 'यह ठीक ही हो रहा है' तो वह मारा गया समझो। पर जिसे यह पछतावा होता है, उसकी यह भूल मिट जाएगी।

'नंबर टू', लुटेरे

प्रश्नकर्ता : पर हमें तो जीवन में ऐसे कुछ अवसर आते हैं कि जब गलत बोलना ही पड़ता है। तब क्या करना चाहिए?

दादाश्री : कितनी जगहों पर झूठ बोलना अच्छा है और कितनी जगहों पर सच बोलना, वह भी अच्छा है। भगवान को तो 'संयम है या नहीं' उससे ही मतलब है। संयम मतलब किसी जीव को दुःख नहीं देता है न! गलत बोलकर दुःख नहीं देना चाहिए।

कितने कानून परमानेन्ट होते हैं और कितने टेम्परेरी कानून होते हैं। टेम्परेरी को लोग परमानेन्ट कर देते हैं और बहुत मुश्किल खड़ी हो जाती है। टेम्परेरी से तो एडजेस्टेबल होकर, उस अनुसार निकाल करके आगे काम निकाल लेना चाहिए, कहीं बैठे रहते हैं पूरी रात?!

प्रश्नकर्ता : तो व्यवहार किस तरह करना चाहिए?

दादाश्री : विषमता खड़ी नहीं होनी चाहिए। समभाव से निकाल करना चाहिए। हमें जहाँ से काम निकलवाना हो, वह मैनेजर कहे, 'दस हज़ार रुपये दो तो आपका पाँच लाख का चेक निकाल दूँगा।' अब हमारे चोखे व्यापार में तो कितना नफा होता है? पाँच लाख रुपये में से दो लाख अपने घर के होते हैं और तीन लाख लोगों के होते हैं, तो वे लोग चक्कर लगाए तो अच्छा कहलाएगा? इसलिए हम उस मैनेजर से कहें, 'भाई, मुझे नफा बचा नहीं है।' ऐसे-वैसे समझाकर, पाँच हज़ार में निकाल करना। नहीं तो अंत में दस हज़ार देकर भी अपना चेक ले लेना चाहिए। अब 'वहाँ मुझसे ऐसे रिश्वत कैसे दी जाए?' ऐसा करो, तब कौन इन सब लोगों को जवाब देगा? वह माँगनेवाला गालियाँ देगा, इतनी-इतनी! ज़रा समझ लो, जैसा समय आए उस अनुसार समझकर काम करो!

रिश्वत देने में गुनाह नहीं है। यह जिस समय पर जो व्यवहार आया, वह व्यवहार तुझे एडजस्ट करना नहीं आया, उसका गुनाह है। अब यहाँ कितने पकड़ पकड़कर रखते हैं?! ऐसा है न, अपने से एडजस्ट हो, जब तक लोग हमें गालियाँ नहीं दें और अपने पास बैंक में हों, तब तक पकड़कर रखना। पर खर्चा बैंक में जमा रकम से ज़्यादा हो और पैसे माँगनेवाले गालियाँ दे रहे हों तो क्या करना चाहिए? आपको कैसा लगता है?

प्रश्नकर्ता : हाँ, ठीक है।

दादाश्री : मैं तो अपने व्यापार में कह देता था कि, 'भाई, दे आओ रुपये। हम भले ही चोरी नहीं करते या चाहे जो नहीं करते, पर रुपये देकर आओ।' नहीं तो लोगों को चक्कर लगवाना, वह अपने जैसे अच्छे लोगों का काम नहीं है। इसलिए रिश्वत देना, उसे मैं गुनाह नहीं कहता हूँ। गुनाह तो किसीने हमें माल दिया है और उसे हम टाइम पर पैसे नहीं देते, उसे गुनाह कहता हूँ।

लुटेरा रास्ते में पैसे माँगे तो दे दोगे या नहीं? या फिर सत्य की खातिर नहीं दोगे?

प्रश्नकर्ता : दे देने पड़ेंगे।

दादाश्री : क्यों वहाँ पर दे देते हो?! और यहाँ क्यों नहीं देते?! ये सेकन्ड प्रकार के लुटेरे हैं। आपको नहीं लगता ये सेकन्ड प्रकार के लुटेरे हैं?!

प्रश्नकर्ता : लुटेरे तो पिस्तौल दिखाकर लेते हैं न?

दादाश्री : यह नई पिस्तौल दिखाता है। यह भी डर तो डाल देता है न कि 'चेक तुझे महीनेभर तक नहीं दूँगा!' फिर भी गालियाँ खाने तक हम पकड़कर रखें और फिर रिश्वत देने के लिए हाँ कहें, उसके बदले गालियाँ खाने से पहले 'पत्थर के नीचे से हाथ निकाल लो' ऐसा कहा है भगवान ने। पत्थर के नीचे से सँभालकर हाथ निकालना, नहीं तो पत्थर के बाप का कुछ भी जानेवाला नहीं है। आपका हाथ टूट जाएगा। कैसा लगता है आपको?

प्रश्नकर्ता : बिलकुल ठीक है।

दादाश्री : अब ऐसा पागलपन कौन सिखाएगा? कोई सिखाएगा? सभी सत्य की पूँछ पकड़ते हैं। अरे, नहीं है यह सत्य। यह तो विनाशी सत्य है, सापेक्ष सत्य है। हाँ, यानी किसीकी हिंसा होती हो, किसीको दु:ख होता हो, कोई मारा जाता हो, ऐसा नहीं होना चाहिए।

इस तरफ माँगनेवाले बेचारे गले तक आ गए हैं और इस तरफ वह मैनेजर गले तक आ गया है, 'आप दस हज़ार नहीं दोगे तो मैं आपको चेक नहीं दूँगा।'

तब ये दूसरे, सेकन्ड प्रकार के लुटेरे! ये सुधरे हुए लुटेरे और वे बिना सुधरे हुए लुटेरे!! ये सिविलाइज़्ड लुटेरे, वे अन्‌सिविलाइज़्ड लुटेरे!

सत्य ठहराने से, बने असत्य

प्रश्नकर्ता : सत्य को सत्य ठहराने से, उसका प्रयत्न करने से असत्य बन जाता है।

दादाश्री : इस जगत् में वाणी मात्र सत्य-असत्य से बाहर है। उसे सत्य में ले जाना हो तो ले जा सकते हैं, असत्य में ले जाना हो तो ले जा सकते हैं। वे दोनों आग्रहपूर्वक बोले जाएँ, ऐसा नहीं है। आग्रहपूर्वक बोले, वह पोइज़न! शास्त्रकारों ने कहा है कि बहुत अधिक आग्रह किया इसलिए असत्य है और आग्रह नहीं किया इसलिए सत्य है। और सत्य को सत्य ठहराने जाओगे तो असत्य बनकर खड़ा रहेगा, ऐसे जगत् में सत्य ठहराते हो?!

इसलिए सत्य-असत्य का झंझट रहने दो। वैसे झंझटवाले वहाँ कोर्ट में जाते हैं। पर हम कोई कोर्ट में नहीं बैठे हैं। हमें तो यहाँ दुःख नहीं हो, वह देखना है। सत्य बोलते हुए सामनेवाले को दुःख होता हो तो हमें बोलना ही नहीं आता।

शोभायमान होता है सत्य, सत्य के रूप में

ऐसा है, सत्य की हरएक जगह पर ज़रूरत है और यदि सत्य हो तो विजय होती है। पर सत्य उसके सत्य के रूप में होना चाहिए, उसकी परिभाषा में होना चाहिए।

खुद का सच्चा ठहराने के लिए लोग पीछे पड़े हैं। परन्तु सच्चे को सच्चा मत ठहराना। सच्चे में, यदि कोई सामनेवाला व्यक्ति आपके सच के सामने यदि विरोध करे तो जान लेना कि आपका सच नहीं

है, कुछ कारण है उसके पीछे। इसलिए सच किसे कहा जाता है? सच्ची बात को सच्चा कब माना जाता है? कि सिर्फ सत्य के सामने नहीं देखना है। वह चारों प्रकार से होना चाहिए। सत्य होना चाहिए, प्रिय होना चाहिए, हितवाला होना चाहिए और मित मतलब कम शब्दों में होना चाहिए, वह सत्य कहलाता है। इसलिए सत्य, प्रिय, हित और मित, इन चार गुणों सहित बोलेगा तो सत्य है, नहीं तो असत्य है।

नग्न सत्य, शोभा नहीं देता

नग्न सत्य बोलना वह भयंकर गुनाह है। क्योंकि कितनी ही बातों में सत्य तो व्यवहार में बोला जाता है, वही बोलना चाहिए। किसीको दुःख हो, वैसी वाणी सच्ची-सत्य कहलाती ही नहीं। नग्न सत्य मतलब केवल सत्य ही बोलें तो वह भी झूठ कहलाएगा।

नग्न स्वरूप में सत्य किसे कहा जाता है? कि खुद की मदर हो उसे कहेंगे कि, 'आप तो मेरे बाप की पत्नी हो!' ऐसा कहे तो अच्छा दिखेगा? यह सत्य हो तो भी माँ गालियाँ देगी न? माँ क्या कहेगी? 'मुए, मुँह मत दिखाना, मर गया तू मेरे लिए!' अरे, यह सत्य कह रहा हूँ। आप मेरे बाप की पत्नी होती हो, ऐसा सब कबूल करें वैसी बात है! पर ऐसा नहीं बोलते। यानी नग्न सत्य नहीं बोलना चाहिए।

सत्य, पर प्रिय होना चाहिए

यानी सत्य की परिभाषा क्या दी गई है? व्यवहार सत्य कैसा होना चाहिए? व्यवहार सत्य कब तक कहलाता है? कि सत्य की पूँछें पकड़कर बैठे हैं, वह सत्य नहीं है। सत्य मतलब तो साधारण प्रकार से इस व्यवहार में सच होना चाहिए। वह भी वापिस सामनेवाले को प्रिय होना चाहिए।

लोग नहीं कहते कि, 'एय, काणे, तू यहाँ आ।' तो उसे अच्छा लगेगा? और कोई धीरे से कहें, 'भाई, आपकी आँख किस तरह चली गई?' तो वह जवाब देगा या नहीं देगा? और उसे काणा कहें तो?! पर वह सत्य खराब लगेगा न! इसलिए यह उदाहरण दिया है। सत्य प्रिय होना चाहिए।

नहीं तो सत्य भी यदि सामनेवाले को प्रियकर नहीं हो तो वह सत्य नहीं माना जाता। कोई बूढ़े हों तो उन्हें 'माँजी' कहना चाहिए। उन्हें बुढ़िया कहा हो तो वह कहेगी, 'मरे, मुझे बुढ़िया कहता है?!' अब हो अठहतर साल की, पर उसने बुढ़िया कहा तो पुसाता नहीं है। किसलिए? उसे अपमान जैसा लगता है। इसीलिए हम उन्हें 'माँजी' कहें, कि 'माँजी आइए'। तो वह सुंदर दिखता है और तब वह खुश हो जाती है। 'क्या भाई, पानी चाहिए? आपको पानी पिलाऊँ?!' कहेंगी। फिर पानी-वानी सभी पिलाती हैं।

हितकारी, तो ही सत्य

तब वहाँ पर फिर सावधान रहने को कहा है, कि सत्य वह सिर्फ प्रिय नहीं पर सामनेवाले को हितकर भी होना चाहिए। सामनेवाले को फायदेमंद होना चाहिए, तो सत्य माना जाएगा। यह तो उसे लूट लेना, धोखा दे देना, वह सत्य कहलाता ही नहीं न! इसलिए सिर्फ सत्य से नहीं चलेगा। सत्य होना चाहिए और वह सामनेवाले को प्रिय लगना चाहिए। सामनेवाले को प्रिय लगे वैसे गुणाकार होने चाहिए। और सत्य सिर्फ प्रिय हो तो भी नहीं चलेगा। वह हितकारी होना चाहिए।

सामनेवाले का हित नहीं होता हो तो वह किस काम का?! गाँव में तलाब भर गया हो तो हम बच्चे से कहें, 'देख तलाब पर एक डायन रहती है न, वह बहुत नुकसान करती है...' ऐसे चाहे जिस रास्ते हम उसे डराएँ तो वह असत्य है, फिर भी हितकारी है न?! तो वह सत्य माना जाएगा।

प्रश्नकर्ता : पर हितकारी हो वह बात सामान्य रूप से सामनेवाले को प्रिय नहीं लगती।

दादाश्री : अब वह हितकारी है या क्या, वह अपनी मान्यता कईबार गलत होती है। और यह तो हम मानते हैं कि मैं हितकारी कह रहा हूँ। फिर भी ये नहीं मानते हैं। अरे, हितकारी कहाँ से लाया तू? हितकारी एक वाक्य भी कहाँ से लाया तू? हितकारी बात तो कैसी

होती है? सामनेवाले व्यक्ति को मारें तो भी वह सुने। हितकारी बात करनेवाले के पास तो, वह सामनेवाले व्यक्ति को मारे तो भी वह सुनेगा। सुनेगा या नहीं सुनेगा? क्योंकि खुद समझ जाता है कि मेरे हित के लिए कह रहे हैं। इसलिए अपनी बात जो सामनेवाले को प्रिय नहीं लगती, फिर प्रिय लगे और हितकारी नहीं हो, तो भी बेकार है।

मित बिना का सत्य, कुरूप

अब इतने से ही नहीं हो जाता फिर। ऐसी तीनों चीज़ें एक व्यक्ति ने कीं, सत्य कहा, प्रिय लगे वैसा बोले, हितकारी लगे वैसा बोले, पर हम कहें, 'अब बहुत हो गया, आपकी बात सारी समझ गया। आपने मुझे सलाह दी, और वह मुझे समझ में आ गई, अब मैं जा रहा हूँ।' तो वह हमें क्या कहेगा? 'ना, नहीं जाना है। खड़ा रह। मेरी बात पूरी सुन। तू सुन तो सही।' वह फिर असत्य हो गया। इसलिए मित कहा है भगवान ने वहाँ पर। मित मतलब सही परिमाण में होना चाहिए। थोड़े ही शब्दों में नहीं होता तो सत्य नहीं माना जाता। क्योंकि ज़रूरत से ज़्यादा बोलें तो सामनेवाला व्यक्ति ऊब जाता है, वह सत्य नहीं माना जाता। उस सत्य से तो रेडियो अच्छा है कि हमें जब स्विच बंद करना हो तो कर सकते हैं! यह रेडियो बंद करना हो तो होता है, पर यह जीवित रेडियो बंद नहीं होता। इसलिए मित नहीं हो तो वह भी गुनाह है। इसलिए वह भी झूठ हुआ। ज़रूरत से ज़्यादा, एक्सेस बोलना हो गया, वह भी झूठ हो गया। क्योंकि अहंकार है उसके पीछे। इसलिए सत्य कह रहा हो तो भी वह बुरा दिखता है, हितकारी बोले तो भी वह बुरा दिखता है। क्योंकि मित नहीं है। मतलब नोर्मेलिटी होनी चाहिए, तब वह सत्य माना जाएगा।

मित मतलब सामनेवाले को अच्छी लगे उतनी ही वाणी, ज़रूरत हो उतना ही बोले, अधिक नहीं बोले, सामनेवाले को ज़रूरत से ज़्यादा लग रहा हो तो बंद कर दे। और अपने लोग तो पकड़ने को घूमते हैं। अरे, इसके बदले तो रेडियो अच्छा, वे पकड़ते तो नहीं हैं। ये तो उसका हाथ पकड़कर बोलते ही रहते हैं। इस तरह हाथ पकड़ें, वैसे

देखे हैं आपने? 'अरे आप सुनो, सुनो, मेरी बात सुनो!' देखो कैसे होते हैं न!! मैंने देखे हैं ऐसे।

आत्मार्थ झूठ, वही सच

प्रश्नकर्ता : परमार्थ के काम के लिए थोड़ा झूठ बोले उसका दोष लगता है?

दादाश्री : परमार्थ मतलब आत्मा के लिए जो कुछ भी किया जाता है, उसका कुछ भी दोष नहीं लगता और देह के लिए जो कुछ भी किया जाता है, गलत किया जाए तो दोष लगता है और अच्छा किया जाए तो गुण लगता है। आत्मा के लिए जो कुछ भी किया जाए, उसमें हर्ज नहीं है। आत्मा के लिए आप परमार्थ कहते हो न!? हाँ, आत्महेतु होता है न, उसके जो-जो कार्य होते हैं उसमें कोई दोष नहीं है। सामनेवाले को अपने निमित्त से दु:ख हो तो वह दोष लगता है।

कषाय के बदले असत्य उत्तम है

इसलिए हमने कहा है कि आत्मा प्राप्त करने के लिए घर से असत्य बोलकर आओगे तो वह सत्य है। पत्नी कहे, 'वहाँ नहीं जाना है दादा के पास।' पर आत्मा प्राप्त करने का आपका हेतु है, तो असत्य बोलकर आओगे तो भी जिम्मेदारी मेरे सिर पर है। कषाय कम करने के लिए घर जाएँ और सत्य बोलने से घर में कषाय बढ़ जाएँ ऐसा हो तो असत्य बोलकर भी कषाय बंद कर देना अच्छा। वहाँ फिर सत्य को एक तरफ रख देना चाहिए? 'यह' सत्य वहाँ पर असत्य ही है!!

'झूठ' से भी कषाय रोको

जहाँ सत्य का कुछ भी आग्रह है तो वह असत्य हो गया! इसलिए हम भी झूठ बोलते हैं न! हाँ, क्योंकि उस बेचारे को कोई आदमी परेशान कर रहा हो और इन लोगों ने तो पूँछ पकड़ी हुई है। गधे की पूँछ पकड़ी वह पकड़ी! अरे, छोड़ दे न! यह लातें मारे तो

छोड़ देना चाहिए। लात लगी तो हम समझ जाते हैं कि इस गधे की पूँछ मैंने पकड़ी हुई है। सत्य की पूँछ नहीं पकड़नी है। सत्य की पूँछ पकड़ी, वह असत्य है। यह पकड़कर रखना, वह सत्य ही नहीं है। छोड़ देना, वह सत्य है!

चाचा कहते हों, 'क्या फूटा?' तो हमें ज़रा झूठ बोलकर ऐसे समझाना आना चाहिए कि 'भाई, पड़ोसवाले के वहाँ कुछ फूट गया लगता है।' तो चाचा कहेंगे, 'हाँ, तब कोई हर्ज नहीं।' इसलिए वहाँ झूठ बोलें तो भी हर्ज नहीं है। क्योंकि वहाँ सच बोलेंगे तो चाचा कषाय करेंगे, यानी वे बहुत नुकसान उठाएँगे न! इसलिए वहाँ 'सच' की पूँछ पकड़कर रखने जैसा नहीं है। और सच की पूँछ पकड़े, उसे ही भगवान ने 'असत्य' कहा है।

'वह' सत्य किस काम का?

बाक़ी, सच्चा-झूठा वह तो एक लाइन ऑफ डिमार्केशन है, नहीं कि वास्तव में वैसा ही है। 'सत्य की यदि पूँछ पकड़ोगे तो असत्य कहलाएगा', तब वे भगवान कैसे थे?! कहनेवाले कैसे थे?! 'हे साहेब, सत्य को भी असत्य कहते हो?' 'हाँ, पूँछ क्यों पकड़ी?' सामनेवाला कहे कि 'नहीं, ऐसा ही है।' तो हमें छोड़ देना चाहिए।

यह झूठ बोलना सिर्फ हमने ही सिखलाया है, इस दुनिया में दूसरे किसीने सिखलाया नहीं है। परन्तु उसका यदि दुरुपयोग करे तो जिम्मेदारी उसकी खुद की। बाक़ी, हम तो इसमें से छटक जाने का मार्ग दिखलाते हैं पर उसका दुरुपयोग करे तो उसकी जोखिमदारी। यह तो छटकने का मार्ग दिखाते हैं कि भाई, इन चाचा को कषाय नहीं हो उसके लिए ऐसा करना। नहीं तो उन चाचा को कषाय हो इसलिए आपसे कषाय करेंगे। 'तू बिना अक्कल का है। बहू को कुछ कहता नहीं है। वो बच्चे का ध्यान नहीं रखती है। ये प्याले सारे फोड़ देती है।' इसलिए ऐसा सब होता है, और सुलगता है फिर! यानी कषाय हुए कि सब सुलगता रहता है। उसके बदले सुलगते ही टोकरी से ढँक देना चाहिए!

वह तो सारा हल आ जाता है। पर यह झूठ और सच ऐसा शब्द ही नहीं होता है। वह तो डिमार्केशन लाइन है।

व्यवहार 'ड्रामा' से छूटता है

व्यवहार मतलब क्या? दोनों को आमने-सामने संतोष होना चाहिए। व्यवहार से तो रहना पड़ेगा न? बहुत ऊँचे प्रकार का सुंदर व्यवहार आए तब 'शुद्ध उपयोग' रहता है।

प्रश्नकर्ता : व्यवहार ऊँचा रखना हो तो क्या करना चाहिए?

दादाश्री : भावना रखनी चाहिए। लोगों का व्यवहार देखो, हमारा व्यवहार देखो। देखने से सब आ जाएगा। व्यवहार मतलब सामनेवाले को संतोष देना वह। व्यवहार को 'कट ऑफ' नहीं कर सकते। वह तो आत्महत्या की कहलाएगी। व्यवहार तो धीरे-धीरे खतम होना चाहिए। यह विनाशी सत्य है, इसलिए छोड़ नहीं देना है। यह तो बेसिक अरेन्जमेन्ट है एक प्रकार का। इसलिए शादी भी करना, मेरी वाइफ है ऐसा भी कहना, वाइफ को ऐसा भी कहना कि, 'तेरे बिना मुझे अच्छा नहीं लगता।' वह तो कहना ही पड़ता है। ऐसा नहीं कहे तो गाड़ी किस तरह चले? हम भी अभी तक हीराबा से ऐसा कहते हैं कि, 'आप हो तब अच्छा लगता है। पर हमसे यहाँ रहा नहीं जा सकता न, अब!'

प्रश्नकर्ता : निःस्वार्थ कपट!

दादाश्री : हाँ, निःस्वार्थ कपट! उसे ड्रामा कहा जाता है। दिस इज़ ड्रामेटिक! इसलिए यह हम भी सारा अभिनय करते हैं आपके साथ। हम जो दिखते हैं न, जो बातें करते हैं, उस रूप हम नहीं हैं। यह तो सब आपके साथ अभिनय करते हैं, नाटक-ड्रामा करते हैं।

मतलब व्यवहार सत्य किसे कहा जाता है? कि किसी जीव को नुकसान नहीं हो उस तरह से चीज़ें ले, चीज़ें ग्रहण करे, किसी जीव को दुःख नहीं हो वैसी वाणी बोले, किसी जीव को दुःख नहीं

हो वैसा वर्तन हो वह मूल सत्य है, व्यवहार का मूल सत्य यह है। इसलिए किसीको दुःख नहीं हो वह सबसे बड़ा सिद्धांत है। वाणी से दुःख नहीं हो, वर्तन से दुःख नहीं हो और मन से उसके लिए खराब विचार नहीं किए जाएँ, वह सबसे बड़ा सत्य है, व्यवहार सत्य है, वह भी फिर वास्तव में रियल सत्य नहीं है। यह चरम व्यवहार सत्य है!

प्रश्नकर्ता : तो फिर सत्य को परमेश्वर कहते हैं, वह क्या है?

दादाश्री : इस जगत् में व्यवहार सत्य का परमेश्वर कौन? तब कहें, जो मन-वचन-काया से किसीको दुःख नहीं देता, किसीको त्रास नहीं देता, वे व्यवहार सत्य के भगवान, और कॉमन सत्य को कानून के रूप में ले गए। बाक़ी वह भी सत्य नहीं है। यह सारा व्यवहार सत्य है।

सामनेवाले को समझ में नहीं आए तब...

प्रश्नकर्ता : मैं सच बात करता हूँ तब घर में मुझे कोई समझ नहीं सकता है। और कोई नहीं समझ सकता, इसलिए फिर वे लोग उल्टी तरह से समझते हैं फिर।

दादाश्री : उस समय हमें बात से दूर रहना चाहिए और मौन रखना चाहिए। उसमें भी फिर दोष तो किसीका होता ही नहीं है। दोष तो अपना ही होता है। ऐसे-ऐसे भी लोग हैं कि जो पड़ोस में अपने साथ परिवार के रूप में होते हैं और वे अपने बोलने से पहले ही अपनी बात सारी समझ जाते हैं। अब वैसे भी लोग होते हैं, पर वे हमें क्यों नहीं मिले और ये लोग ही क्यों मिले?! इसमें सेलेक्शन किसका है? इसलिए सारी ही चीज़ें है इस दुनिया में। पर हमें नहीं मिलतीं, उसमें भूल किसकी? इसलिए वे नहीं समझें तो हमें वहाँ मौन रहना चाहिए, दूसरा उपाय नहीं है।

उल्टे के सामने एडजस्टमेन्ट

प्रश्नकर्ता : दूसरे की समझ के अनुसार गलत लगता हो तो क्या करना चाहिए?

दादाश्री : ये सभी सत्य हैं, वे व्यवहार के लिए पर्याप्त सत्य हैं। मोक्ष में जाना हो तो सभी झूठे हैं। सभी का प्रतिक्रमण तो करना ही पड़ेगा। मैं आचार्य हूँ, उसका भी प्रतिक्रमण करना पड़ेगा। मैंने खुद को आचार्य माना उसका भी प्रतिक्रमण करना पड़ेगा। अरे, क्योंकि मैं शुद्धात्मा हूँ।

इसलिए यह सब झूठा है, सब झूठा, आपको ऐसा समझ में आता है या नहीं आता? यह नहीं समझने के कारण ऐसा कहते हैं कि 'मैं सत्य कह रहा हूँ।' अरे, सत्य कहे तो कोई सामनेवाला आवाज़ नहीं करे। यह मैं यहाँ पर बोलता हूँ, तो सामने आवाज़ उठाने के लिए कोई तैयार होता है? विवाद होते हैं? मैं जो बोलता रहता हूँ, वह सब सुनते ही रहते हैं न?

प्रश्नकर्ता : हाँ। सुनते ही रहते हैं।

दादाश्री : विवाद नहीं करते न? वह सत्य है। वह वाणी सत्य है और सरस्वती है। और जिसके सामने टकराव होता है वह वाणी झूठी, संपूर्ण झूठी। वह सामनेवाला कहे, 'बेअक्कल, आप बोलते मत रहो।' इसलिए वह भी झूठा और यह भी झूठा और सुननेवाले भी झूठे वापिस! सुननेवाले कुछ नहीं बोले हों, वे सारे ही, पूरी टोली झूठी।

प्रश्नकर्ता : अपने कर्म के उदय ऐसे हों तो सामनेवाले को अपना सच हो तो भी झूठ ही लगता हो तो?

दादाश्री : सच होता ही नहीं है। कोई व्यक्ति सच बोल ही नहीं सकता। झूठ ही बोलता है। सच तो सामनेवाला कबूल करे ही, वह सच है, नहीं तो खुद की समझ से सत्य माना हुआ है। खुद के माने हुए सत्य को कहीं लोग स्वीकार नहीं करेंगे।

इसलिए भगवान ने सत्य किसका कहा है? तब कहे, वीतराग वाणी, वह सत्य है। वीतराग वाणी मतलब क्या? वादी कबूल करे और प्रतिवादी भी कबूल करे। उसे प्रमाण माना गया है। यह तो सारी रागी-द्वेषी वाणी, झूठी-लबाड़ी। जेल में डाल देने जैसी। इसमें सत्य

होता होगा? रागी वाणी में भी सत्य नहीं होता और द्वेषी वाणी में भी सत्य नहीं होता। वह लगता है आपको कि इसमें सत्य होगा? यह हम यहाँ पर बोल रहे हैं, वह आपका आत्मा कबूल करता है। यहाँ विवाद नहीं होता है। अपने यहाँ कभी भी विवाद हुआ है? कोई व्यक्ति शायद कभी ज़रा कच्चा पड़ गया होगा! दादा के शब्द पर फिर कोई बोला नहीं है। क्योंकि आत्मा की शुद्ध प्योर बात है। और रागी-द्वेषी वाणी को सच कहा जाएगा?

प्रश्नकर्ता : नहीं कहा जाएगा, पर व्यवहार सत्य कहलाएगा न?

दादाश्री : व्यवहार सत्य मतलब निश्चय में असत्य है। व्यवहार सत्य मतलब सामनेवाले को जो फिट हुआ तो वह सत्य और फिट नहीं हुआ तो असत्य। व्यवहार सत्य तो वास्तव में सत्य है ही नहीं।

प्रश्नकर्ता : हम सत्य मानते हों और सामनेवाले को फिट नहीं हुआ तो?

दादाश्री : फिट नहीं हुआ तो वह सब झूठा।

हम भी कहते हैं न! किसीको ज़रा-सी हमारी बात समझ में नहीं आई हो तो हम उसकी भूल नहीं निकालते। हमारी भूल कहते हैं कि, 'भाई, हमारी ऐसी कैसी भूलें रह गई कि उसे नहीं समझ में आया। समझ में आना ही चाहिए।' हम हमारा दोष देखते हैं। सामनेवाले का दोष ही नहीं देखते। मुझे समझाना आना चाहिए।

यानी सामनेवाले का दोष होता ही नहीं है। सामनेवाले के दोष देखते हैं, वह तो भयंकर भूल कहलाती है। सामनेवाले का दोष तो हमें लगता ही नहीं, कभी भी लगा ही नहीं।

इस तरह होता है मतभेद का निकाल

प्रश्नकर्ता : दुष्कृत्य के सामने भी लड़ना नहीं चाहिए? अनिष्ट के सामने?

दादाश्री : लड़ने से आपकी शक्तियाँ बेकार चली जाएँगी सारी।

इसलिए भावना रखो कि निकाल करना है। हमेशा आर्बिट्रेशन (सुलह) से ही पूरा फायदा है। दूसरे झंझट में पड़ने जैसा नहीं है। उससे आगे गए कि नुकसान! अब आर्बिट्रेशन कब होता है? कि दोनों पार्टियों के भाव हों कि 'हमें निकाल ही करना है' तो ही आर्बिट्रेशन होता है।

तो भी अच्छा हल निकल आए। मतभेद पड़े वहाँ अपने शब्द वापिस खींच लेने, वह समझदार पुरुषों का रिवाज है। जहाँ मतभेद पड़े, वहाँ हम कहें कि दीवार के साथ टकराए। अब वहाँ पर किसका दोष? दीवार का दोष कहना चाहिए?! और सच्ची बात में मतभेद कभी भी होता ही नहीं है। अपनी सच्ची बात है और सामनेवाले की झूठी है, पर टकराव हुआ तो वह झूठा है। इस जगत् में सच्चा कुछ होता ही नहीं है। सामनेवाले ने आपत्ति उठाई वह सारा ही झूठ है। सभी बातों में दूसरे आपत्ति उठाते हैं?!

मेरा सच, वही अहंकार है

यह तो खुद का इगोइज़म है कि यह मेरा सही है और दूसरे का गलत है। व्यवहार में जो 'सही-गलत' बोला जाता है वह सब इगोइज़म है। फिर भी व्यवहार में कौन-सा सही या गलत? जो मनुष्यों को या किसी जीव को नुकसानदायक वस्तुएँ हैं, उन्हें हम गलत कहते हैं। व्यवहार को नुकसानदायक है, सामाजिक नुकसानदायक है, जीवों को नुकसानदायक है, छोटे जीवों को या दूसरे जीवों को नुकसानदायक है, उन सबको हम गलत कह सकते हैं। दूसरा कुछ 'सही-गलत' होता ही नहीं है, दूसरा सब 'करेक्ट' ही है। फिर हर किसीका ड्रॉईंग अलग ही होता है। वह सब ड्रोईंग कल्पित है, सच्चा नहीं है। जब इस कल्पित में से निर्विकल्प की तरफ आता है, और निर्विकल्प की हैल्प लेता है न, तब निर्विकल्पता उत्पन्न होती है। वह एक सेकन्ड के लिए भी हुआ, कि हमेशा के लिए हो गया! आपको समझ में आई क्या यह बात?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : हाँ, एक बार समझ लेने की ज़रूरत है कि यह

ड्रॉईंग कैसा है! वह सारा ड्रॉईंग समझ लें न, तो फिर हमारी उस पर से प्रीति उठ जाएगी।

नहीं गलत कुछ प्रभु के यहाँ

बाक़ी, इस दुनिया में जो कुछ गलत चीज़ें होती हुई देखने में आती हैं, उनका अस्तित्व ही नहीं है। इन गलत वस्तुओं का अस्तित्व आपकी कल्पना से खड़ा हो गया है। भगवान को गलत चीज़ इस जगत् में कभी लगी ही नहीं। हरकोई जो कुछ कर रहा है वह खुद की जोखिमदारी पर ही कर रहा है। उसमें गलत वस्तु नहीं है। चोरी करके लाया, वह लोन लेकर बाद में फिर वापिस करेगा। दान देता है, वह लोन देकर बाद में लेगा। इसमें गलत क्या है? भगवान को कभी भी गलत लगा ही नहीं। किसी भाई को साँप काटे तो उसे भगवान जानते हैं कि इसने उसका हिसाब चुकाया। हिसाब चुकाते हैं, उसमें कोई गुनहगार है ही नहीं न! गलत चीज़ है ही नहीं न!

विनाशी की पकड़ क्या?

और वापिस ऐसा जो न्याय करते हैं न, वे आग्रहवाले होते हैं। 'बस, तुझे ऐसा करना ही पड़ेगा।' ऐसा जानते हो आप? उसे सत्य की पकड़ पकड़ना कहा जाता है। इससे तो वह अन्यायवाला अच्छा है कि 'हाँ, भाई तू कहे वैसे।'

लौकिक सत्य, वह सापेक्ष वस्तु है। कुछ समय के बाद वह असत्य हो जाती है। इसलिए उसकी खेंच नहीं होनी चाहिए, पकड़ नहीं होनी चाहिए।

भगवान ने कहा है कि पाँच लोग कहें वैसा मानना और तेरी पकड़ मत पकड़ना। जो पकड़ पकड़े वह अलग है। खेंच रखो, तो वह आपको नुकसान और सामनेवाले को भी नुकसान! यह सत्य-असत्य वह 'रिलेटिव सत्य है, व्यवहार सत्य है, उसकी खेंच नहीं होनी चाहिए।'

यह सत्य विनाशी है, इसलिए उससे लिपटकर मत रहना। जिसमें

लात लगे वह सत्य ही नहीं होता। कभी एकाध-दो लातें लगे, पर यह तो लातें लगती ही रहती हैं। जो सत्य हमें गधे की लातें खिलाए, उसे सत्य कैसे कहा जाए? इसलिए अपने में कहावत है न, गधे की पूँछ पकड़ी सो पकड़ी! छोड़ता नहीं अपने सत्य को!! इसलिए सत्य और वह सब पद्धतिअनुसार होना चाहिए। सत्य किसे कहें वह 'ज्ञानी' के पास से समझ लेना है।

और जो सत्य विनाशी है, उस सत्य के लिए झगड़ा कितना करना चाहिए? नोर्मेलिटी उसकी हद तक ही होती है न! जहाँ रिलेटिव ही है, फिर उसकी बहुत खींचतान नहीं करनी चाहिए। उसे छोड़ देना चाहिए यानी पूँछ पकड़कर नहीं रखनी चाहिए। समय आए तब छोड़ देना चाहिए।

अहंकार वहाँ, सर्व असत्य

सत्य-असत्य कोई बाप भी नहीं पूछता है। मनुष्य को विचार तो करना चाहिए कि मेरा सत्य है फिर भी सामनेवाला व्यक्ति क्यों स्वीकार नहीं करता? क्योंकि सत्य बात करने के पीछे आग्रह है, कच-कच है!

सत्य उसे कहा जाता है कि सामनेवाला स्वीकार करता हो। भगवान ने कहा है कि सामनेवाला खींचे और आप छोड़ नहीं दो तो आप अहंकारी हो, सत्य को हम देखते नहीं हैं। भगवान के वहाँ सत्य की क़ीमत नहीं है। क्योंकि यह व्यवहार सत्य है। और व्यवहार में अहंकार आ गया, इसलिए हमें छोड़ देना चाहिए।

आप बहुत ज़ोर से खींचते हो और मैं ज़ोर से खींचूँ तो वह टूट जाएगा। दूसरा क्या होगा इसमें?! इसलिए भगवान ने कहा है कि डोरी तोड़ना मत। कुदरती डोरी है यह! और तोड़ने के बाद गाँठ पड़ेगी। और पड़ी हुई गाँठ निकालना वह आपका काम नहीं रहा। फिर कुदरत के हाथ में गया। वह केस कुदरत के हाथ में गया। इसलिए आपके हाथ में है तब तक कुदरत के हाथ में मत जाने देना। कुदरत की कोर्ट में तो हालत बिगड़ जाएगी। इसलिए कुदरत की कोर्ट

में नहीं जाने देने के लिए, हम जानें कि यह बहुत खींच रहे हैं और वह तोड़ देनेवाले हैं, तो उसके बदले तो हमें ढीला रख देना चाहिए। पर ढीला रखें तो वह भी ठीक तरह से रखना। नहीं तो वे लोग सब गिर जाएँगे। इसलिए धीरे-धीरे रखना। वह तो हम भी धीरे-धीरे रखते हैं। कोई ज़िद पर अड़ गया हो न, तो धीरे-धीरे रखते हैं। नहीं तो गिर जाए बेचारा तो क्या होगा?!

सत्य का आग्रह, कब तक योग्य?

प्रश्नकर्ता : तो सत्य का आग्रह रखना चाहिए या नहीं?

दादाश्री : सत्य का आग्रह रखना चाहिए, पर कितना? कि वह दुराग्रह में नहीं जाना चाहिए। क्योंकि 'वहाँ' पर तो कुछ सत्य है ही नहीं। सभी सापेक्ष है।

पकड़, खुद के ज्ञान की

किसीका गलत तो है ही नहीं जगत् में। सारा विनाशी सत्य है, तो फिर उसमें क्या पकड़ पकड़नी?! फिर भी सामनेवाला उसकी पकड़ पकड़े तो हम छोड़ दें। हमें कह छूटना है इतना ही, हमें अपनी भावना प्रदर्शित करनी चाहिए कि 'भाई, ऐसा है!' पर उसकी पकड़ नहीं पकड़ना। खुद के ज्ञान की जिसे पकड़ नहीं है, वह मुक्त ही है न!

प्रश्नकर्ता : खुद का ज्ञान मतलब कौन-सा ज्ञान?

दादाश्री : खुद के ज्ञान की पकड़ नहीं, उसका अर्थ क्या कि खुद का ज्ञान दूसरों को समझाए उस घड़ी वह कहे, 'नहीं, आपकी बात गलत है।' मतलब वह खुद की बात का आग्रह रखे, उसे पकड़ कहते हैं। एक बार विनती करें कि, 'भाई, फिर से आप बात को समझो तो सही।' तब फिर वह कहेगा, 'नहीं, समझ लिया। आपकी बात ही गलत है।' आपको फिर पकड़ छोड़ देनी है। ऐसा कहना चाहते हैं हम। आज कौन-सा वार हुआ?

प्रश्नकर्ता : शुक्रवार।

दादाश्री : हम किसीसे कहें, 'शुक्रवार', तो वह कहे, 'नहीं, शनिवार।' तो हम कहें, 'वापिस ज़रा आप देखो तो सही।' तब वे कहते हैं, 'नहीं, शनिवार ही हुआ है।' इसलिए हम फिर आग्रह नहीं रखते, छोड़ देते हैं। और सिर्फ संसार में नहीं, ज्ञान में भी वैसा ही। खुद के ज्ञान की भी पकड़ नहीं पकड़ते हम। ये कहाँ माथाफोड़ करे?! सारी रात माथाफोड़ी करें, पर वह तो दीवार जैसा है। जो खुद की पकड़ नहीं छोड़ता तो उसके बदले तो हम छोड़ दें, वह अच्छा। नहीं तो वह जो पकड़ने का अहंकार है, वह जाए नहीं, तब तक छूटा नहीं जाएगा, हमारी मुक्ति नहीं होगी।

'यह मेरा सच है' वह एक प्रकार का अहंकार है, उसे भी निकालना तो पड़ेगा न?

हारा, वह जीता

हम मुकाबला करने नहीं आए हैं, अपनी सच्ची बात दिखाने आए हैं। मुकाबला करें कि 'तेरा गलत है, हमारा सच्चा है' ऐसा नहीं। 'भाई, तेरी दृष्टि से तेरा सच है' ऐसा करके आगे निकल जाएँ। क्योंकि नहीं तो ज्ञान की विराधना की, ऐसा कहलाएगा। ज्ञान वह कहलाता है कि विराधक भाव खड़ा ही नहीं होना चाहिए। क्योंकि वह उसकी दृष्टि है। उसे हमसे कैसे गलत कहा जाए? पर इसमें जो छोड़ देते हैं वे वीतराग मार्ग के और जो जीतें वे वीतराग मार्ग के नहीं हैं। भले ही वे जीतें। वैसा हम साफ-साफ कहते हैं। हमें कोई आपत्ति नहीं है। हम साफ-साफ बोल सकते हैं। हम तो जगत् से हारकर बैठे हैं। हम सामनेवाले को जिताएँ तो उसे नींद आएगी बेचारे को। मुझे तो नींद वैसे ही आ जाती है, हारकर भी नींद आ जाती है। और वह हारे तो उसे नींद नहीं आएगी, तो मुश्किल मुझे होगी न! मेरे कारण बेचारे को नींद नहीं आई न?! ऐसी हिंसा हममें नहीं होती! किसी प्रकार की हिंसा हममें नहीं होती है!

कोई व्यक्ति गलत बोले, वह उल्टा बोले उसमें उसका दोष नहीं है। वह कर्म के उदय के आधीन बोलता है। पर आपसे उदयाधीन

बोला जाए तो उसके आप जानकार होने चाहिए कि, 'यह गलत बोला गया।' क्योंकि आपके पास पुरुषार्थ है। यह 'ज्ञान' मिलने के बाद आप पुरुष हुए हो। प्रकृति में किसी भी प्रकार का थोड़ा भी हिंसक वर्तन नहीं, हिंसक वाणी नहीं, हिंसक मनन नहीं, उस दिन आपको तीन सौ साठ डिग्री हो गई होगी!

इतना ही आग्रह, एक्सेप्ट

प्रश्नकर्ता : मुझे कैसा था? कि सच बोलना चाहिए, सच ही करना चाहिए, गलत नहीं करना चाहिए। यह गलत करें तो ठीक नहीं कहलाता, वैसा आग्रह था।

दादाश्री : आत्मा का हित देखना है। बाक़ी, सच बोलना भी, यह सच मतलब संसारहित है और यह सच वह आत्मा के बारे में झूठा ही है। इसलिए बहुत आग्रह नहीं करना चाहिए किसी वस्तु का। आग्रह नहीं रखना। महावीर भगवान के मार्ग में जो आग्रह है न, वह सारा ज़हर है। एक आत्मा का ही आग्रह, दूसरा कोई आग्रह नहीं, आत्मा का और आत्मा के साधनों का आग्रह!

आग्रह, वही असत्य

इस जगत् में ऐसा कोई सत्य नहीं है कि जिसका आग्रह करने जैसा हो! जिसका आग्रह किया वह सत्य ही नहीं है।

महावीर भगवान क्या कहते थे? सत्याग्रह भी नहीं होना चाहिए। सत्य का आग्रह भी नहीं होना चाहिए। सत्य का आग्रह अहंकार के बिना हो ही नहीं सकता।

आग्रह मतलब ग्रसित। सत्य का आग्रह हो या चाहे जो आग्रह हो पर वह ग्रसित हुआ कहलाता है। तो उस सत्य का आग्रह करोगे न, सत्य यदि आउट ऑफ नोर्मेलिटी हो जाएगा न, तो वह असत्य है। आग्रह रखा वह वस्तु ही सत्य नहीं है। आग्रह रखा मतलब असत्य हो गया।

भगवान निराग्रही होते हैं, दुराग्रही नहीं होते। सत्याग्रह भी

भगवान के अंदर नहीं होता। सत्याग्रह भी संसारी लोगों को ही होता है। भगवान तो निराग्रही होते हैं। हम भी निराग्रही हैं। हम झंझट में नहीं पड़ते। नहीं तो उसका अंत ही नहीं आए, ऐसा है।

न सत्य का, न ही असत्य का आग्रह

इस सत्य का आग्रह हम नहीं करते। क्योंकि यह सत्य एक्ज़ेक्टली नहीं है, वह गलत वस्तु भी नहीं है। पर वह रिलेटिव सत्य है और हम रियल सत्य के ऊपर ध्यान रखनेवाले हैं! रिलेटिव में सिर नहीं मारते, रिलेटिव में आग्रह नहीं होता हमें।

हमें तो सत्य का भी आग्रह नहीं है, इसलिए मुझे असत्य का आग्रह है वैसा नहीं है। किसी वस्तु का भी आग्रह नहीं होता वहाँ फिर! असत्य का भी आग्रह नहीं चाहिए और सत्य का भी आग्रह चाहिए ही नहीं। क्योंकि सत्य-असत्य है ही नहीं कुछ। हक़ीक़त में कुछ है नहीं यह सब। यह तो रिलेटिव सत्य है। पूरा जगत् रिलेटिव सत्य में आग्रह मान बैठा है, पर रिलेटिव सत्य विनाशी है। हाँ, वह स्वभाव से ही विनाशी है।

कौन-सा सच्चा? छोड़े वह या पकड़े वह?

यह जो व्यवहार सत्य है, उसका आग्रह कितना भयंकर जोखिम है? क्या सभी कबूल करते हैं, व्यवहार सत्य को? चोर ही कबूल नहीं करेंगे, लो! कैसा लगता है आपको? उस कम्युनिटी की एक आवाज़ है न?! वह सत्य ही वहाँ पर असत्य हो जाता है!!

इसलिए यह सब रिलेटिव सत्य है, कुछ भी ठिकाना नहीं है। और उस तरह के सत्य के लिए लोग मर मिटते हैं। अरे, सत् के लिए मर मिटना है। सत् अविनाशी होता है और यह सत्य तो विनाशी है।

प्रश्नकर्ता : सत् में आग्रह होता ही नहीं।

दादाश्री : सत् में आग्रह होता ही नहीं है न! आग्रह संसार में होता है। संसार में सत्य का आग्रह होता है। और सत्य के आग्रह से

बाहर गए, इसलिए फिर मताग्रह कहो, कदाग्रह कहो, दुराग्रह कहो, फिर वे सभी हठाग्रह में जाते हैं।

प्रश्नकर्ता : संसार में सत्य का आग्रह कहाँ रखते हैं!!

दादाश्री : सत्य का आग्रह सिर्फ करने के लिए ही करते हैं। अभी यहाँ पर तीन रास्ते आएँ तो एक कहेगा, 'इस रास्ते पर चलो।' दूसरा कहेगा, 'नहीं, इस रास्ते।' तीसरा कहेगा, 'नहीं, इस रास्ते पर चलो।' वे तीनों अलग-अलग रास्ते बताते हैं और एक खुद अनुभवी हो वह जानता है कि, 'इसी रास्ते पर सच्ची बात है और ये दोनों गलत रास्ते पर हैं।' तो उसे एक-दो बार ऐसे कहना चाहिए कि, 'भाई, हम आपसे विनती करते हैं कि यही सच्चा रास्ता है।' फिर भी नहीं माने तो खुद का छोड़ दे, वही सच्चा है।

प्रश्नकर्ता : खुद का तो छोड़ दे, पर वह यदि जानता हो कि यह गलत रास्ता है तो उस पर वह साथ में किस तरह जाए?

दादाश्री : जो हो वही ठीक है फिर। पर छोड़ देना चाहिए।

आग्रह छूटने से, संपूर्ण वीतराग के दर्शन

प्रश्नकर्ता : इसलिए यह तो असत्य का आग्रह तो छोड़ना है, पर सत्य का भी आग्रह छोड़ना है!

दादाश्री : हाँ, इसीलिए कहा है न,

जब सत्य का भी आग्रह छूट जाता है,
तब वीतराग संपूर्ण पहचाने जाते हैं।

सत्य का आग्रह हो तब तक वीतराग नहीं पहचाने जाते। सत्य का आग्रह नहीं रखना है। देखो कितना सुंदर वाक्य लिखा है!

चोरी-झूठ, हर्ज नहीं, पर...

कोई चोर चोरी करता हो और वह हमारे पास आए और कहे, 'मैं तो चोरी का काम करता हूँ तो अब मैं क्या करूँ?' तब मैं उसे कहूँ

कि, 'तू करना, मुझे हर्ज नहीं है। पर उसकी ऐसी जिम्मेदारी आती है। तुझे यदि वह जोखिमदारी सहन होती हो तो तू चोरी करना। हमें आपत्ति नहीं है।' तो वह कहेगा कि, 'साहब, इसमें आपने क्या उपकार किया?! जिम्मेदारी तो मेरी आनेवाली ही है।' तब मैं कहूँ कि मेरे उपकार की तरह मैं तुझे कह दूँ कि तू 'दादा' के नाम का प्रतिक्रमण करना या महावीर भगवान के नाम का प्रतिक्रमण करना कि 'हे भगवान, मुझे यह काम नहीं करना है, फिर भी करना पड़ता है। उसकी मैं क्षमा माँगता हूँ।' ऐसे क्षमा माँगते रहना और काम भी करते जाना। जान-बूझकर मत करना। जब तुझे भीतर इच्छा हो कि, 'अब काम नहीं करना है।' तो उसके बाद तू बंद कर देना। तेरी इच्छा है न, यह काम बंद करने की? फिर भी अपने आप ही अंदर से धक्का लगे और करना पड़े, तो भगवान से माफ़ी माँगना। बस, इतना ही! दूसरा कुछ भी नहीं करना है।

चोर से ऐसा नहीं कह सकते कि 'कल से काम बंद कर देना।' उससे कुछ होता नहीं है। कुछ चलेगा ही नहीं न! 'ऐसे छोड़ दो, वैसे छोड़ दो' ऐसा कुछ नहीं कह सकते। हम कुछ छोड़ने का कहते ही नहीं, इस पाँचवे *आरे* (कालचक्र का बारहवाँ हिस्सा) में छोड़ने का कहने जैसा ही नहीं है। वैसे ही यह भी कहने जैसा नहीं है कि यह ग्रहण करना। क्योंकि छोड़ने से छूटे ऐसा नहीं है।

यह विज्ञान बिलकुल अनजान लगता है लोगों को! सुना हुआ नहीं, देखा नहीं, जाना नहीं! अभी तक तो लोगों ने क्या कहा? कि, 'यह गलत कर्म छोड़ो और अच्छे कर्म करो।' उसमें छोड़ने की शक्ति नहीं है और बांधने की शक्ति नहीं है और बेकार ही गाया करते हैं कि 'आप करो।' तब वह कहता है कि, 'मुझसे होता नहीं है, मुझे सत्य बोलना है पर बोला नहीं जाता।' तब हमने नया विज्ञान निकाला। 'भाई, असत्य बोलने में हर्ज नहीं है न तुझे? वह तो हो सकेगा न? अब असत्य बोलेगा तो तू ऐसा करना, उसका फिर इस तरह से प्रतिक्रमण करना।' चोरी करे तो उसे लोग कहते हैं, 'नहीं, चोरी बंद कर दे।' किस तरह बंद हो वह?! कब्ज़ हो गया हो, उसे जुलाब करवाना हो

तो दवाई देनी पड़ती है, जिसे दस्त हो गए हों, उसे बंद करना हो तो भी दवाई देनी पड़ती है! यह तो ऐसे ही कहीं चले वैसा है यह जगत्?!

...तो जोखिमदारी नहीं

प्रश्नकर्ता : हरएक भूल का हम पछतावा करते रहें, तो फिर उसका पाप तो बंधता ही नहीं न?

दादाश्री : नहीं, बंधता तो है। गांठ लगाई हुई हो, वह गांठ तो है ही, पर वह जली हुई गांठ है। इसलिए आनेवाले भव में ऐसे हाथ लगाए न तो झड़ जाएगी। पछतावा करे उसकी गांठ जल जाती है। गांठ तो रहती ही है। सत्य बोलो तो ही गांठ नहीं पड़ती। सत्य बोला जाए वैसी स्थिति नहीं है। परिस्थिति अलग है।

प्रश्नकर्ता : तो फिर सच कब बोला जा सकेगा?

दादाश्री : संयोग सब सीधे हों, तब सच बोला जाएगा।

इसके बदले तो पछतावा करना न! उसकी गारन्टी हम लेते हैं। तू तो चाहे जो गुनाह करे तो उसका पछतावा करना। फिर तुझे जोखिमदारी नहीं आएगी, उसकी गारन्टी है। हमारे सिर पर जिम्मेदारी है, हमारी जिम्मेदारी पर कर रहे हैं।

शास्त्र, एडजस्टेबल चाहिए

चौथे आरे के शास्त्र पाँचवे आरे में फिट नहीं होंगे। इसलिए ये नये शास्त्र रचे जा रहे हैं। अब ये नये शास्त्र काम में आएँगे। चौथे आरे के शास्त्र चौथे आरे के अंत तक चले थे, फिर वे काम नहीं आए। क्योंकि पाँचवे आरे के मनुष्य अलग, उनकी बातें अलग, उनका व्यवहार अलग ही तरह का हो गया है। आत्मा तो वो का वो ही है, पर व्यवहार तो पूरा बदल गया न! पूरा ही बदल गया न!!

अब पुराने शास्त्र नहीं चलेंगे

प्रश्नकर्ता : तो कलियुग के शास्त्र अब लिखे जाएँगे?

दादाश्री : कलियुग के शास्त्र अब रचे जाएँगे, कि भले तेरे आचार-विचार-उच्चार में झूठ हो, पर नई योजना तू गढ़। वह धर्म कहलाता है। अभी तक कहते थे कि आचार-विचार और उच्चार वे सत्य हैं और फिर वैसा विशेष हो वैसी तू योजना गढ़। वह सत्युग की योजना थी। फिर वैसा का वैसा विशेष होता था, वहाँ से बढ़ता था वह। और अब कलियुग में वे दूसरी तरह से सारे शास्त्र रचे जाएँगे और वे सभी को हैल्प करेंगे। और वापिस क्या कहेंगे? कि, 'तू चोरी करता है, उसमें मुझे आपत्ति नहीं, हर्ज नहीं है' ऐसा कहें न, वह बात वह पुस्तक में पढ़ने बैठता है। और 'चोरी नहीं करनी चाहिए' वह पुस्तक परछत्ती पर रख देता है। इन मनुष्यों का स्वभाव ऐसा है! 'आपत्ति नहीं' कहा तो वह पुस्तक को पकड़ता है, और वापिस कहेगा कि 'यह पढ़ने से मुझे ठंडक होती है!'

इसलिए ऐसे शास्त्र रचे जाएँगे। यह तो मैं बोल रहा हूँ और उसमें से अपने आप नये शास्त्र रचे जाएँगे। अभी पता नहीं चलेगा, पर नये शास्त्र रचे जाएँगे।

प्रश्नकर्ता : इतना ही नहीं, पर आपने जो पूरा मेथड लिया है न, वह नया अभिगम है।

दादाश्री : हाँ, नया ही अभिगम होगा! लोग फिर पुराने अभिगम को एक ओर रख देंगे।

प्रश्नकर्ता : पर आपने भविष्य की बात की, भविष्य कथन किया है कि अब नये शास्त्र लिखे जाएँगे। तो वह समय परिपक्व हो गया है?!

दादाश्री : हाँ, परिपक्व हो ही गया है न! समय परिपक्व होता है और वैसा हुआ करता है। समय परिपक्व होकर, वे सभी नये शास्त्र रचने की सारी तैयारियाँ हो रही हैं!!

- **जय सच्चिदानंद**

मूल गुजराती शब्दों के समानार्थी शब्द

आरे : कालचक्र का बारहवाँ हिस्सा

ऊपरी : बॉस, वरिष्ठ मालिक

कल्प : कालचक्र

गोठवणी : सेटिंग, प्रबंध, व्यवस्था

नोंध : अत्यंत राग अथवा द्वेष सहित लम्बे समय तक याद रखना, नोट करना

नियाणां : अपना सारा पुण्य लगाकर किसी एक वस्तु की कामना करना

धौल : हथेली से मारना

सिलक : राहखर्च, पूँजी

तायफ़ा : फज़ीता

उपलक : सतही, ऊपर ऊपर से, सुपरफ्लुअस

कढ़ापा : कुढ़न, क्लेश

अजंपा : बेचैनी, अशांति, घबराहट

राजीपा : गुरजनों की कृपा और प्रसन्नता

सिलक : जमापूंजी

पोतापणुं : मैं हूँ और मेरा है, ऐसा आरोपण, मेरापन

लागणी : भावुकतावाला प्रेम, लगाव

उपाधि : बाहर से आनेवाला दु:ख

च्यवन : आत्मा की दैवीय शरीर छोड़ने की क्रिया

वैक्रियिक : देवताओं का अतिशय हल्के परमाणुओं से बना हुआ शरीर जो कोई भी रूप धारण कर सकता है

संपर्क सूत्र

दादा भगवान परिवार

अडालज : **त्रिमंदिर**, सीमंधर सिटी, अहमदाबाद-कलोल हाईवे,
पोस्ट : अडालज, जि.-गांधीनगर, गुजरात - 382421
फोन : 9328661166/9328661177
E-mail : info@dadabhagwan.org

मुंबई : **त्रिमंदिर,** ऋषिवन, काजुपाडा, बोरिवली (E)
फोन : 9323528901

दिल्ली	9810098564	**बेंगलूर**	9590979099
कोलकता	9830080820	**हैदराबाद**	9885058771
चेन्नई	7200740000	**पूणे**	7218473468
जयपुर	8890357990	**जलंधर**	9814063043
भोपाल	6354602399	**चंडीगढ़**	9780732237
इन्दौर	6354602400	**कानपुर**	9452525981
रायपुर	9329644433	**सांगली**	9423870798
पटना	7352723132	**भुवनेश्वर**	8763073111
अमरावती	9422915064	**वाराणसी**	9795228541

U.S.A. : **DBVI Tel. :** +1 877-505-DADA (3232),
Email : info@us.dadabhagwan.org

U.K. : +44 330-111-DADA (3232)

Kenya : +254 722 722 063

UAE : +971 557316937

Dubai : +971 501364530

Australia : +61 421127947
New Zealand : +64 21 0376434
Singapore : +65 81129229

www.dadabhagwan.org

सत्य और असत्य के बीच का भेद क्या है?

असत्य तो असत्य है ही, पर यह जो सत्य है न, वह व्यवहार सत्य है, सच्चा सत्य नहीं है। ये जमाई हमेशा के लिए जमाई नहीं हैं, ससुर भी हमेशा के लिए नहीं होते। निश्चय सत्य हो उसे सत् कहा जाता है, वह अविनाशी होता है। और विनाशी हो उसे सत्य कहा जाता है। यह सत्य भी वापिस असत्य हो जाता है, असत्य ठहरता है। फिर भी यदि सांसारिक सुख चाहिए तो असत्य पर से सत्य में आना चाहिए, और मोक्ष में जाना हो तो यह (व्यवहार) सत्य भी असत्य ठहरेगा तब मोक्ष होगा!

-दादाश्री

dadabhagwan.org

ISBN 978-93-86289-70-4

9 789386 289704

Printed in India

Price ₹20